जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

(भाग - 1) उत्तरार्द्ध

लेखन एवं सङ्कलन :
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षुमण्डल, देहरादून
एवं
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन परिवार, अलीगढ़

इस ग्रन्थ के कुल 382 पृष्ठों को, ग्रन्थ की मोटाई बढ़ जाने के कारण दो भागों में (पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध के रूप में) विभाजित कर दिया गया है।

इस उत्तरार्द्ध (पृष्ठ 252 से 382 तक) का पूर्व का हिस्सा (पृष्ठ 01 से 251 तक) पूर्वार्द्ध में वर्णित है।

17

पर्याय : स्वरूप, भेद एवं लाभ

प्रश्न 1 – पर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – गुणों के विशेष कार्य को पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 2 – (1) पर्याय का सच्चा ज्ञान हो तो क्या हो? (2) पर्याय का ज्ञान किसे है, किसे नहीं है?

उत्तर – (1) पर से मेरी पर्याय आती है – ऐसी मिथ्याबुद्धि का अभाव होकर सम्यक्त्व की प्राप्ति हो जाती है। (2) पर्याय का सच्चा ज्ञान, सम्यग्दृष्टियों को ही होता है; मिथ्यादृष्टियों को नहीं होता है।

प्रश्न 3 – पर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर – दो भेद हैं – व्यंजनपर्याय और अर्थपर्याय।

प्रश्न 4 – व्यंजनपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – द्रव्य के प्रदेशत्वगुण के कार्य को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 5 – अर्थपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर – प्रदेशत्वगुण के अतिरिक्त शेष गुणों के कार्यों को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 6 - व्यंजनपर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद हैं - स्वभावव्यंजनपर्याय और विभावव्यंजन-पर्याय।

प्रश्न 7 - स्वभावव्यंजनपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर - परद्रव्य के सम्बन्धरहित द्रव्य का जो आकार हो, उसे स्वभावव्यंजनपर्याय कहते हैं; जैसे- सिद्धभगवान का आकार और परमाणु का आकार।

प्रश्न 8 - विभावव्यंजनपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर - परनिमित्त के सम्बन्धसहित द्रव्य का जो आकार हो, उसे विभावव्यंजनपर्याय कहते हैं; जैसे-जीव की नर-नारकादि पर्याय।

प्रश्न 9 - अर्थपर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद हैं - स्वभावअर्थपर्याय और विभावअर्थपर्याय।

प्रश्न 10 - स्वभावअर्थपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर - परनिमित्त के सम्बन्धरहित जो अर्थपर्याय होती है, उसे स्वभावअर्थपर्याय कहते हैं; जैसे - जीव का केवलज्ञान, क्षायिक -सम्यग्दर्शन आदि।

प्रश्न 11 - विभावअर्थपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर - परनिमित्त के सम्बन्धसहित जो अर्थपर्याय होती है, उसे विभावअर्थपर्याय कहते हैंद्य जैसे - जीव में राग-द्वेषादिक।

प्रश्न 12 - जीव और पुद्गल में कौन-सी पर्यायें हो सकती हैं ?

उत्तर - चारों प्रकार की पर्यायें, जीव और पुद्गल में हो सकती हैं। (1) स्वभावअर्थपर्यायें, (2) विभावअर्थपर्यायें, (3) स्वभाव-व्यंजनपर्याय, (4) विभावव्यंजनपर्यायें।

प्रश्न 13 – धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्यों में कौन-सी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – इन चार द्रव्यों में मात्र स्वभावअर्थपर्यायें और स्वभाव-व्यंजनपर्यायें ही होती हैं; विभावपर्यायें कभी नहीं होती हैं।

प्रश्न 14 – निगोद से लगाकर चारों गतियों के मिथ्यादृष्टि जीवों में कौन-सी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – विभावअर्थपर्यायें और विभावव्यंजनपर्यायें ही होती हैं; स्वभावपर्यायें नहीं होती हैं।

प्रश्न 15 – सिद्धभगवान में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 16 – चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – विभावव्यंजनपर्याय, स्वभावअर्थपर्याय, और विभाव-अर्थपर्याय; इस प्रकार तीन प्रकार की पर्यायें होती हैं।

प्रश्न 17 – चौथे से चौदहवें गुणस्थान तक तीन पर्यायें एक-सी होती है या कुछ अन्तर है ?

उत्तर – चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक जितनी शुद्धि है, वह स्वभावअर्थपर्याय है और जो अशुद्धि है, वह विभावअर्थपर्याय है। प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय ही है।

प्रश्न 18 – संसारदशा में चौथे से चौदहवें गुणस्थान तक अर्थपर्याय की शुद्धि और अशुद्धि को स्पष्ट समझाओ ?

उत्तर – (1) चौथे गुणस्थान में श्रद्धागुण की स्वभावअर्थपर्याय पूर्ण प्रगट हो जाती है; चारित्र में एकदेश स्वभावअर्थपर्याय प्रगट हो

जाती है परन्तु पूर्ण स्वभावअर्थपर्याय प्रगट नहीं है। (2) बारहवें गुणस्थान में चारित्रगुण की पूर्ण स्वभावअर्थपर्याय प्रगट हो जाती है, किन्तु ज्ञान-दर्शन, वीर्य आदि गुणों में क्षयोपशमरूप एकदेश स्वभाव-अर्थपर्यायें प्रगट हैं, पूर्ण स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट नहीं हैं। (3) तेरहवें गुणस्थान में ज्ञान-दर्शन, वीर्य की पूर्ण स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट हो जाती हैं; योगगुण आदि में स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट नहीं हैं। (4) चौदहवें गुणस्थान में योगगुण की पूर्ण स्वभावअर्थपर्याय प्रगट हो जाती है, किन्तु अभी वैभाविकगुण, क्रियावतीशक्ति, अव्यावाध, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व आदि गुणों की स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट नहीं हैं। (5) चौदहवें गुणस्थान के अन्त में वैभाविकगुण, क्रियावतीशक्ति, अव्याबाध, अवगाहनत्व, अगुरुलघुत्व, सूक्ष्मत्व आदि गुणों की परिपूर्ण स्वभावअर्थपर्यायें प्रगट हो जाती हैं।

प्रश्न 19 – शास्त्रों में आता है कि मिथ्यादृष्टि के भी अस्तित्वादि गुणों की शुद्ध पर्यायें होती हैं, तब आपने मिथ्यादृष्टि को स्वभावपर्यायें क्यों नहीं बतलायी ?

उत्तर – जैसे – किसी के घर में खजाना दबा पड़ा है, परन्तु उसे मालूम नहीं है तो कहा जाता है, उसके पास खजाना नहीं है; उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि की अस्तित्वादि गुणों की शुद्धपर्यायें होने पर भी, उसे अपने आप का पता न होने से स्वभावअर्थपर्यायें कही नहीं जाती हैं।

प्रश्न 20 – परमाणु में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 21 – स्कन्ध में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – विभावव्यंजनपर्यायें और विभावअर्थपर्यायें होती हैं।

प्रश्न 22 – जैसे – आत्मा में चौथे गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक स्वभावअर्थपर्यायें और विभाअर्थपर्यायें होती हैं; उसी प्रकार स्कन्ध में इस प्रकार का होता है या नहीं ?

उत्तर – नहीं होता है। स्कन्धों में, चाहे दो परमाणु का स्कन्ध हो या करोड़ों परमाणुओं का स्कन्ध हो, उसमें दोनों विभावपर्यायें ही होती हैं; स्वभावपर्यायें नहीं होती हैं।

प्रश्न 23 – द्रव्यलिङ्गी मुनि को कौन-सी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – विभावव्यंजनपर्याय और विभावअर्थपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 24 – एक द्रव्य में व्यंजनपर्याय कितनी होती हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य में एक ही व्यंजपर्याय होती है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में एक-एक ही प्रदेशत्वगुण होता है और प्रदेशत्वगुण के परिणमन को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 25 – एक द्रव्य में अर्थपर्यायें कितनी होती हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य में अर्थपर्यायें अनन्त होती हैं, क्योंकि प्रदेशत्वगुण छोड़कर बाकी गुणों के परिणमन को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 26 – एक आत्मा में व्यंजनपर्याय कितनी हैं ?

उत्तर – एक ही है क्योंकि एक आत्मा में एक प्रदेशत्वगुण है और प्रदेशत्वगुण के परिणमन को व्यंजनपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 27 – एक आत्मा में अर्थपर्यायें कितनी हैं ?

उत्तर – एक आत्मा में अनन्त गुण हैं। उनमें एक प्रदेशत्वगुण को छोड़कर, बाकी जितने गुण हैं, उतनी अर्थपर्यायें एक आत्मा में होती हैं क्योंकि प्रदेशत्वगुण को छोड़कर बाकी गुणों के परिणमन को अर्थपर्याय कहते हैं।

प्रश्न 28 – एकक्षेत्रावगाही औदारिकशरीर में व्यंजनपर्यायें कितनी हैं ?

उत्तर – जितने परमाणु हैं, उतनी ही व्यंजनपर्यायें हैं क्योंकि एक परमाणु में एक व्यंजनपर्याय होती है।

प्रश्न 29 – जीवद्रव्य में विभावव्यंजनपर्याय कहाँ तक होती है ?

उत्तर – पहले से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक विभावव्यंजनपर्याय होती हैं, अर्थात् मात्र सिद्धभगवान को छोड़कर अन्य सब जीवों में विभावव्यंजनपर्याय होती है; स्वभावव्यंजनपर्याय नहीं होती है।

प्रश्न 30 – चारों प्रकार की पर्यायें किस द्रव्य में सम्भव है ?

उत्तर – जीव और पुद्गल में ही सम्भव है; अन्य चार द्रव्यों में नहीं।

प्रश्न 31 – धर्म, अधर्म, आकाश और काल में कौन-कौनसी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें ही अनादि-अनन्त होती रहती हैं; इनमें कभी विभावदशा होती ही नहीं है।

प्रश्न 32 – तुम्हारी आत्मा में व्यंजनपर्याय कितनी और अर्थपर्याय कितनी हैं ?

उत्तर – मेरी आत्मा में व्यंजनपर्याय एक और अर्थपर्यायें अनेक हैं।

प्रश्न 33 – किताब में अर्थपर्याय कितनी और व्यंजनपर्याय कितनी हैं ?

उत्तर – किताब में जितने परमाणु हैं, उतनी व्यंजनपर्यायें हैं और एक-एक परमाणु में अनेक-अनेक अर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 34 – सादि-अनन्त स्वभावव्यंजनपर्याय किस द्रव्य में होती है ?

उत्तर – जीव में सिद्धदशा में सादि-अनन्त स्वभावव्यंजनपर्याय होती हैं।

प्रश्न 35 – स्वभावव्यंजनपर्याय में अन्तर और स्वभावअर्थ-पर्याय में समानता – क्या कभी ऐसा होता है ?

उत्तर – सिद्धदशा में किसी का आकार सात हाथ का, किसी का पाँच सौ धनुष का होने से स्वभावव्यंजनपर्याय में अन्तर होता है और स्वभावअर्थपर्याय में समानता होती है।

प्रश्न 36 – स्वभावव्यंजनपर्याय में समानता और स्वभाव-अर्थपर्याय में अन्तर होता हो – क्या ऐसा कभी किसी द्रव्य में होता है ?

उत्तर – परमाणु में सब का आकार एक प्रदेशी होने से स्वभाव-व्यंजनपर्याय में समानता है और स्वभावअर्थपर्यायों में अन्तर है।

प्रश्न 37 – पहले अर्थपर्याय शुद्ध हो, फिर व्यंजनपर्याय शुद्ध हो – ऐसा किन द्रव्यों में होता है ?

उत्तर – किसी-किसी गुण की अर्थपर्याय पहले शुद्ध होती है, परन्तु जब जीवद्रव्य के सब गुणों की अर्थपर्यायें परिपूर्ण शुद्ध हो जाएँ, उसी समय व्यंजनपर्याय भी शुद्ध हो जाती है।

प्रश्न 38 – स्वभावव्यंजनपर्याय और स्वभावअर्थपर्यायें किस द्रव्य में एक साथ होती हैं ?

उत्तर – पुद्गल परमाणु में एक साथ होती हैं।

प्रश्न 39 – सादि-सान्त स्वभावव्यंजनपर्याय किसमें हो सकती है ?

उत्तर – पुद्गल परमाणु में हो सकती है।

प्रश्न 40 – अनादि-अनन्त स्वभावव्यंजनपर्याय किसमें होती है?

उत्तर – धर्म, अधर्म, आकाश और काल में अनादि-अनन्त दोनों स्वभावपर्यायें ही होती हैं।

प्रश्न 41 – केवलज्ञान क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 42 – मिथ्यात्व क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 43 – यथाख्यातचारित्र क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चरित्रगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 44 – कम्पन क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के योगगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 45 – मनःपर्यायज्ञान क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 46 – चीनी में मीठापन क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के रसगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 47 – भगवान की प्रतिमा क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 48 – गोलू नीबू क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 49 – खट्टा नीबू क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के रसगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 50 – अन्धेरा क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के वर्णगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 51 – उजाला क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के वर्णगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 52 – बर्फ क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के स्पर्शगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 53 – बादलों का रङ्ग बदलना क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के वर्णगुण की भिन्न-भिन्न रङ्गरूप विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 54 – सम्यग्ज्ञान क्या है ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 55 – औपशमिकसम्यक्त्व क्या है ?

उत्तर – आत्मा के श्रद्धागुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 56 – सिद्धदशा क्या है ?

उत्तर – आत्मा के सम्पूर्ण गुणों की स्वभावअर्थपर्यायें और स्वभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 57 – पूजा का भाव क्या है ?

उत्तर – आत्मा के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 58 – पूजा में सामग्री चढ़ाने की क्रिया क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के क्रियावतीशक्ति की विभावअर्थ-पर्यायें हैं।

प्रश्न 59 –केवलदर्शन क्या है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के दर्शनगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 60 – दुर्गन्ध क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के गन्धगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 61 – सुगन्ध क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के गन्धगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 62 – गोल रसगुल्ला क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 63 – मीठा रसगुल्ला क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के रसगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 64 – भावश्रुतज्ञान क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 65 – बुखार क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के स्पर्शगुण की उष्णरूप विभावअर्थ-पर्यायें हैं।

प्रश्न 66 – भारी क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा के स्पर्शगुण की विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 67 – शुभाशुभभाव क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 68 – देशचारित्र क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 69 – अनन्तानुबन्धीकषाय के अभावरूप स्वरूपा-चरणचारित्र क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 70 – रोटी क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 71 – बेलन क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 72 – कड़ुवा क्या है ?

उत्तर – पुद्‌गलद्रव्य के रसगुण की विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 73 – घड़ा क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 74 – चश्मा क्या है ?

उत्तर – आहारवर्गणा के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्यायें हैं।

प्रश्न 75 – मैं सुबह उठा – इस वाक्य में पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – शरीर, आहारवर्गणा की क्रियावतीशक्ति से उठा; मुझसे (आत्मा से) नहीं उठा, तब पर्याय को माना और शरीर के उठनेरूप क्रियावतीशक्ति के कार्य को आत्मा का कार्य माने तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 76 – शरीर के उठनेरूप पुद्‌गलों के कार्यों को आत्मा का कार्य माने तो इसका क्या फल होगा ?

उत्तर – चारों गतियों में घूमकर निगोद इस खोटी मान्यता का फल होगा।

प्रश्न 77 – शरीर के उठने को आत्मा का कार्य माननेरूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो ?

उत्तर – शरीर के उठनेरूप कार्य में, प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी क्रियावतीशक्ति की उस समय पर्याय की योग्यता से ही उठा है; मेरे से (आत्मा से) नहीं — ऐसा जानकर, ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज आत्मा का आश्रय ले, तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो। तब अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से 'मैं सुबह उठा' – ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 78 – सुबह उठना – उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ, इसको जानने-मानने से धर्म की प्राप्ति कैसे हो गयी?

उत्तर – जैसे, सुबह उठना – उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ है, वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता से हो चुके हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे – ऐसा मानते ही धर्म की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न 79 – दर्शनमोहनीयकर्म के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ – इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – (1) श्रद्धागुण में से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, तो गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, माना। (2) दर्शनमोहनीय के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' नहीं माना।

प्रश्न 80 – क्षायिकसम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ – इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, को कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – कार्माणवर्गणा में से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' माना। (2) क्षायिकसम्यक्त्व

होने से दर्शनमोहनीय का क्षय हुआ तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' नहीं माना।

प्रश्न 81 – केवलज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से केवलज्ञान की प्राप्ति हुयी – इसमें गुणों के कार्य को पयार्य कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) आत्मा के ज्ञानगुण में से केवलज्ञान की प्राप्ति हुयी तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' माना। (2) केवलज्ञानावरणीय-कर्म के अभाव से केवलज्ञान हुआ तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' नहीं माना।

प्रश्न 82 – केवलज्ञान की प्राप्ति होने से केवलज्ञानावरणीय-कर्म का अभाव हुआ – इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं', कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) कार्माणवर्गणा में से केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव हुआ, तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' माना। (2) केवलज्ञान की प्राप्ति होने से केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव हुआ, तो 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' – नहीं माना।

प्रश्न 83 – आँख से ज्ञान होता है – पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण में से ज्ञान आया – तो पर्याय को माना और आँख से ज्ञान हुआ – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 84 – गुरु से ज्ञान होता है – इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना, कब नहीं माना ?

उत्तर – ज्ञान, आत्मा के ज्ञानगुण में से आया, तो पर्याय को माना और गुरु से ज्ञान हुआ – तो पर्याय की नहीं माना।

प्रश्न 85 – केवलज्ञान के कारण, दिव्यध्वनि होती है, इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – भाषावर्गणा से दिव्यध्वनि होती है – तो पर्याय को माना और केवलज्ञान के कारण, दिव्यध्वनि होती है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 86 – दिव्यध्वनि होने से केवलज्ञान होता है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – केवलज्ञान, आत्मा के ज्ञानगुण में से होता है – तो पर्याय को माना और दिव्यध्वनि होने से केवलज्ञान होता है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 87 – चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म के क्षय से यथाख्यात-चारित्र होता है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – यथाख्यातचारित्र, आत्मा के चारित्रगुण में से आता है – तो पर्याय को माना और चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म के क्षय से यथाख्यातचारित्र होता है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 88 – यथाख्यातचारित्र होने से चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – कार्माणवर्गणा में से चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ – तो पर्याय को माना और यथाख्यातचारित्र होने के कारण चारित्रमोहनीय द्रव्यकर्म का क्षय हुआ – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 89 – बाल-बच्चों से सुख मिलता है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – सुख, आत्मा के सुखगुण में से आता है, तो पर्याय को माना; और बाल–बच्चों से सुख मिलता है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 90 – केवली, श्रुतकेवली के निकट होने से क्षायिक-सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – क्षायिकसम्यक्त्व, आत्मा के श्रद्धागुण में आता है – तो पर्याय को माना; और केवली–श्रुतकेवली के निकट होने से क्षायिकसम्यक्त्व की प्राप्ति होती है – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 91 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – घड़ा, मिट्टी से बना तो पर्याय को माना; और कुम्हार ने घड़ा बनाया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 92 – घड़ा बनने के कारण, कुम्हार को राग आया – इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – राग, चारित्रगुण में से आया – तो पर्याय को माना और घड़ा बनने के कारण, राग आया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 93 – श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया, इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) समयसारशास्त्र, आहारवर्गणा से बना तो पर्याय को माना; (2) श्री कुन्दकुन्द भगवान ने समयसारशास्त्र बनाया तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 94 – सीमन्धरभगवान से कुन्दकुन्द भगवान को विशेष ज्ञान की प्राप्ति हुई, इसमें पर्याय को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) कुन्दकुन्द भगवान को अपने ज्ञानगुण में से विशेष ज्ञान की प्राप्ति हुयी – तो पर्याय को माना; (2) सीमन्धरभगवान से कुन्दकुन्द भगवान को विशेषज्ञान की प्राप्ति हुयी – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 95 – मैंने रुपया कमाया, इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं' कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – (1) तिजोरी में रुपया आहारवर्गणा की क्रियावतीशक्ति से आया – तो पर्याय को माना; (2) मेरे कमाने से आया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 96 – मैंने मकान बनाया, इसमें गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं, कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – (1) आहारवर्गणा से मकान बना – तो पर्याय को माना। (2) मैंने मकान बनाया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 97 – मैं जोर-शोर से बोलता हूँ, इसमें 'गुणों के कार्य को पर्याय कहते हैं', कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर – भाषावर्गणा से शब्द आया – तो पर्याय को माना और मेरे से शब्द आया – तो पर्याय को नहीं माना।

प्रश्न 98 – उपरोक्त वाक्यों में त्रिकालीउपादान से कार्य हुआ; पर से नहीं – ऐसा जानने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर – अज्ञानी जीव, अनादि से एक-एक समय करके पर से व निमित्त से कार्य हुआ – ऐसी मान्यता से, निमित्त मिलाने में पागल हो रहा था। जब उसे पता चला त्रिकाली में से कार्य होता है; पर से नहीं तो पर में से कर्ता-भोक्ताबुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति हो जाती है।

प्रश्न 99 – उपरोक्तानुसार पर्याय का सच्चा ज्ञान किसे होता है और किसे नहीं ?

उत्तर – पर्याय का सच्चा ज्ञान, चौथे गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक के जीवों को ही होता है; मिथ्यादृष्टियों को पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं होता है।

प्रश्न 100 – द्रव्यलिङ्गी मुनि ने ग्यारह अङ्ग नौ पूर्व का ज्ञान किया – तो क्या उसे पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं था ?

उत्तर – द्रव्यलिङ्गी का ग्यारह अङ्ग नौ पूर्व का जो ज्ञान है, वह मिथ्याज्ञान है, वह ज्ञान नहीं है; इसलिए द्रव्यलिङ्गी मुनि को पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं है, क्योंकि सम्यग्दर्शन हुए बिना, पर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं हो सकता है।

प्रश्न 101 – अपना ज्ञान हुए बिना, शास्त्र का ज्ञान, मिथ्या-ज्ञान है; कार्यकारी नहीं है – ऐसा कहीं योगसार में आया है ?

उत्तर – श्री योगसार, गाथा 53 में आया है कि 'शास्त्र पाठी भी मूर्ख है जो निजतत्त्व अजान। यही कारण जग जीव ये, पावे नहिं निर्वाण। यही बात समयसार, गाथा 274 तथा 317 में बतायी है।'

प्रश्न 102 – पर्याय की दूसरी परिभाषा क्या है ?

उत्तर – परि = समस्त प्रकार से। आय = लाभ, अर्थात् अपने में हो समस्त प्रकार से लाभ मानना, इसे पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 103 – परिणमन किसे कहते हैं ?

उत्तर – परि = समस्त प्रकार से। णमन = झुक जाना, अर्थात् समस्त प्रकार से अपने में झुक जाना, इसे परिणमन कहते हैं।

प्रश्न 104 – अवस्था किसे कहते हैं ?

उत्तर – अब = निश्चय। स्था = स्थिति करना, अर्थात् अपने में ही निश्चय से स्थिति करना, ठहरना, उसे अवस्था कहते हैं।

प्रश्न 105 – अखण्ड द्रव्य में अंश कल्पना करने को क्या कहते हैं ?

उत्तर – पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 106 – पर्याय के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर – अंश, भाग, प्रकार, भेद, छेद, उत्पाद-व्यय, क्रमवर्ती; व्यतिरेकी, अनित्य, विशेष, अनवस्थित आदि पर्याय के नामान्तर हैं।

प्रश्न 107 – 'व्यतिरेकी' किसे कहते हैं ?

उत्तर – भिन्न-भिन्न को व्यतिरेकी कहते हैं।

प्रश्न 108 – व्यतिरेक कितने प्रकार का है ?

उत्तर – चार प्रकार का है। (1) देश व्यतिरेक, (2) क्षेत्र व्यतिरेक, (3) काल व्यतिरेक, (4) भाव व्यतिरेक।

प्रश्न 109 – देश व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – गुण-पर्याय के पिण्ड के भेद को 'देश व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 110 – क्षेत्र व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक-एक प्रदेश / क्षेत्र के भिन्नपने के भेद को 'क्षेत्र व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 111 – काल व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – पर्याय के भिन्नत्व के भेद को 'काल व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 112 – भाव व्यतिरेक किसे कहते हैं ?

उत्तर – गुण के भिन्नत्व के भेद को 'भाव व्यतिरेक' कहते हैं।

प्रश्न 113 – क्रमवर्ती किसे कहते हैं?

उत्तर – एक, फिर दूसरी, फिर तीसरी, फिर चौथी, फिर पाँचवीं इस प्रकार प्रवाहक्रम से जो वर्तन करे, उसे क्रमवर्ती कहते हैं।

प्रश्न 114 – पर्याय को उत्पाद-व्यय क्यों कहते हैं?

उत्तर – पर्याय सदा उत्पन्न होती है और विनष्ट होती है; इसलिए पर्याय को उत्पाद-व्यय कहते हैं। कोई भी पर्याय, गुण की भाँति सदैव नहीं रहती है।

प्रश्न 115 – उत्पाद किसे कहते हैं?

उत्तर – द्रव्य में नवीन पर्याय की उत्पत्ति को उत्पाद कहते हैं।

प्रश्न 116 – व्यय किसे कहते हैं?

उत्तर – पूर्व पर्याय के नाश को व्यय कहते हैं।

प्रश्न 117 – ध्रौव्य किसे कहते हैं?

उत्तर – उत्पाद और व्यय में द्रव्य की सदृशतारूप स्थायी रहने को ध्रौव्य कहते हैं।

प्रश्न 118 – नियमसार में पर्याय किसे कहा है?

उत्तर – परि समतान्त भेदमेति गच्छतीति पर्याय, अर्थात् जो सर्व और से भेद को प्राप्त करे, वह पर्याय है। *(गाथा-14)*

प्रश्न 119 – पर्याय तो अनित्य है, तब पर्याय सत् है या असत्?

उत्तर – पर्याय, एक समय पर्यन्त का सत् है और द्रव्य-गुण, त्रिकाल सत् है; इसलिए द्रव्य-गुण और पर्याय तीनों सत् हैं।

प्रश्न 120 – गुण, अंश है या अंशी ?

उत्तर – (1) द्रव्य की अपेक्षा से गुण, उस द्रव्य का अंश है; (2) पर्याय की अपेक्षा से गुण, अंशी है।

प्रश्न 121 – पर्याय किसका अंश है ?

उत्तर – (1) पर्याय, गुण का एक समयपर्यन्त का अंश है। (2) पर्याय, द्रव्य का भी एक समयपर्यन्त का अंश है।

प्रश्न 122 – अंश-अंशी को संक्षिप्त में समझाइए ?

उत्तर – (1) जब द्रव्य को अंशी कहा तो गुण को अंश कहा; (2) जब गुण को अंशी कहा तो पर्याय को अंश कहा।

प्रश्न 123 – पाँच अजीवद्रव्य हैं, वे जानते नहीं हैं तो वे (अजीव) किसी के आधार के बिना कैसे व्यवस्थित रह सकते हैं ?

उत्तर – (1) पाँच अजीवद्रव्य, अस्तित्वादि सामान्यगुण और अपने-अपने विशेषगुणसहित हैं। (2) पाँचों अजीवद्रव्यों में सत्पना लक्षण होने से उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्त है। उन्हें किसी प्रकार पर की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादा लिए स्वयं परिणमती हैं, किसी की परिणमायी परिणमती नहीं हैं, क्योंकि स्वयं कायम रहकर बदलना, प्रत्येक वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न 124 – पर्याय किससे होती हैं ?

उत्तर – द्रव्य और गुणों से पर्याय होती है।

प्रश्न 125 – द्रव्य और गुणों से पर्याय होती हैं, इस अपेक्षा पर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं, द्रव्यपर्याय और गुणपर्याय।

प्रश्न 126 – द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान होना, द्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 127 – द्रव्यपर्याय के कितने भेद हैं ?

उत्तर – दो भेद हैं। समानजातीयद्रव्यपर्याय, असमानजातीय-द्रव्यपर्याय।

प्रश्न 128 – समानजातीयद्रव्यपर्याय किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक जाति के अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान, समानजातीयद्रव्यपर्याय हैं।

प्रश्न 129 – समानजातीयद्रव्यपर्याय के कुछ नाम बताओ ?

उत्तर – बिस्तर, कम्बल, रोटी, हलुवा, मेज, पुस्तक इत्यादि – इसमें अनेक पुद्‌गलों में एकपने का ज्ञान होता है, यह समानजातीय-द्रव्यपर्याय के उदाहरण हैं।

प्रश्न 130 – समानजातीयद्रव्यपर्याय में चार बातें कौन-कौन सी आयी ?

उत्तर – (1) एक जाति होनी चाहिए। (2) अनेक द्रव्य होने चाहिए। (3) अनेक द्रव्यों में एकपने का कथन होना चाहिए। (4) जैसा-जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा-वैसा ही ज्ञान में आना चाहिए।

प्रश्न 131 – मेरा बिस्तरबन्द है – इस वाक्य में समानजातीय-द्रव्यपर्याय की चार बातें लगाकर समझाइए ?

उत्तर – बिस्तरबन्द – समानजातीयद्रव्यपर्याय है – बिस्तरबन्द में (1) पुद्‌गल एक जाति के द्रव्य हैं। (2) अनेक परमाणु हैं।

(3) मेरा बिस्तरबन्द है – ऐसा कथन किया जाता है। (4) [अ] बिस्तरबन्द में आहारवर्गणा के अनेक परमाणु हैं। एक-एक परमाणु का दूसरे परमाणुओं में अत्यन्ताभाव है। [आ] बिस्तरबन्द, स्कन्धरूपपर्याय में प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्यान्योभाव है। [इ] बिस्तरबन्द के प्रत्येक परमाणु में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी -अपनी एक-एक व्यंजनपर्याय और अनन्त-अनन्त अर्थपर्यायोंसहित विराज रहा है। [ई] जब बिस्तरबन्द में परमाणुओं की एक पुद्‌गल जाति होते हुए भी, परस्पर में कोई कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, तब मुझ चेतन जीवतत्त्व के साथ उनका सम्बन्ध कैसे हो सकता है? कभी भी नहीं हो सकता है। ऐसा श्रद्धान-ज्ञान वर्ते तो उपचरितअसद्‌भूतव्यवहारनय से मेरा बिस्तरबन्द है – ऐसे कथन को समानजातीयद्रव्यपर्याय कहा जा सकता है, परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 132 – असमानजातीयद्रव्यपर्याय किसे कहते हैं।

उत्तर – अनेक जाति के अनेक द्रव्यों में जिससे एकपने का ज्ञान हो, वह असमानजातीयद्रव्यपर्याय हैं; जैसे – मनुष्य, देव आदि।

प्रश्न 133 – असमानजातीयद्रव्यपर्यायों के कुछ नाम बताओ?

उत्तर – (1) अरहन्त भगवान (2) देव (3) मनुष्य (4) तिर्यंच (5) नारकी, (6) कुत्ता (7) चूहा (8) चींटी (9) पृथ्वीकायिक (10) जलकायिक (11) स्त्री (12) लड़का; इन्हें असमानजातीय-द्रव्यपर्यायें कहते हैं, क्योंकि इनमें अनेक जाति के अनेक द्रव्यों में एकपने का ज्ञान होता है।

आत्मा, द्रव्यकर्म और शरीर के सम्बन्ध को असमानजातीय-

द्रव्यपर्याय कहते हैं। चारों गतियों के जीव, असमानजातीयद्रव्यपर्याय में आते हैं।

प्रश्न 134 - असमानजातीयद्रव्यपर्याय में चार बातें कौन-कौनसी होती हैं ?

उत्तर - (1) अनेक जाति होनी चाहिए। (2) अनेक द्रव्य होने चाहिए। (3) अनेक द्रव्यों में एकपने का कथन होना चाहिए। (4) जैसा-जैसा वस्तुस्वरूप है, वैसा-वैसा ही ज्ञान में आना चाहिए।

प्रश्न 135 - मैं कैलाशचन्द्र हूँ - इस वाक्य में असमान-जातीयद्रव्यपर्याय की चार बातें लगाकर समझाइये ?

उत्तर - कैलाशचन्द्र, असमानजातीयद्रव्यपर्याय है। कैलाशचन्द्र में (1) जीव-पुद्‌गल, ये अनेक जाति हुई। (2) जीव-पुद्‌गल, ये अनेक द्रव्य हुए। (3) जीव-पुद्‌गल, अनेक द्रव्यों में 'मैं' कैलाशचन्द्र हूँ - ऐसा कथन किया जाता है। (4) [अ] मैं एक ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी ज्ञायक जीवतत्त्व हूँ; संयोगरूप औदारिक-तैजस -कार्माणशरीर, भाषा, मनरूप अनेक परमाणु, ये अजीवतत्त्व हैं। [आ] कैलाशचन्द्र अजीवतत्त्व में औदारिक, तैजस, कार्माणशरीर-भाषा, मन में प्रत्येक परमाणुओं का आपस में अत्यन्ताभाव है और प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है। [इ] औदारिक आदि शरीरों के प्रत्येक परमाणु में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी एक-एक व्यंजनपर्याय व अनन्त-अनन्त अर्थपर्यायोंसहित संयोगरूप रह रहा है। [ई] जब औदारिक आदि शरीरों के परमाणुओं में एक पुद्‌गल जाति होते हुए भी, परस्पर में कर्ता-भोक्ता आदि का कोई सम्बन्ध नहीं है, तब मुझ चेतन ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व के साथ, कैलाशचन्द्र अजीवतत्त्व का

सम्बन्ध कैसे हो सकता है? कभी भी नहीं हो सकता है। ऐसा जानने-मानने ही आस्रव-बन्धतत्त्व का अभाव प्रारम्भ हो जाता है और तुरन्त संवर-निर्जरा की प्राप्ति हो जाती है; तब अनुपचरित-असद्भूतव्यवहारनय से मैं 'कैलाशचन्द्र हूँ' - ऐसे कथन को असमानजातीयद्रव्यपर्याय कहा जा सकता है परन्तु ऐसा है नहीं।

प्रश्न 136 - समानजातीय-असमानजातीयद्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान किसे होता है और किसे नहीं?

उत्तर - ज्ञानियों को ही होता है; अज्ञानियों को नहीं होता है।

प्रश्न 137- समानजातीयद्रव्यपर्याय और असमानजातीय-द्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान, ज्ञानियों को ही क्यों होता है?

उत्तर - (1) **समानजातीयद्रव्यपर्याय** में ज्ञानी जानते हैं कि एक-एक परमाणु, अपनी-अपनी एक व्यंजनपर्याय और अन्य गुणों की अर्थपर्यायों सहित बिराज रहा है। एक परमाणु का, दूसरे परमाणु से सम्बन्ध नहीं है परन्तु लोकव्यवहार में 'बिस्तरबन्द आदि' बोलने में आता है।

(2) **असमानजातीयद्रव्यपर्याय** में ज्ञानी जानता है कि आत्मा एक है और औदारिक, तैजस तथा कार्माणशरीर आदि में जितने परमाणु हैं, वह सब प्रत्येक अलग-अलग एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहे हैं। वह प्रत्येक द्रव्य को अलग-अलग जानता है, तथापि लोकव्यवहार में 'मनुष्य-देव' आदि बोला जाता है; इसलिए ज्ञानियों को समानजातीय, असमानजातीय द्रव्य-पर्याय का सच्चा ज्ञान होता है।

प्रश्न 138 - अज्ञानी को समानजातीयद्रव्यपर्याय और असमानजातीय-द्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान क्यों नहीं होता है?

उत्तर – अज्ञानी (1) पृथक्-पृथक् द्रव्यों को एक मानते हैं। (2) दोनों के मिलने से पर्याय हुयी है – ऐसा मानते हैं। (3) एक -एक द्रव्य का सच्चा ज्ञान न होने से; अर्थात् अपना ज्ञान न होने से द्रव्यलिङ्गी आदि सब मिथ्यादृष्टियों का समानजातीय और असमानजातीयद्रव्यपर्याय का सच्चा ज्ञान नहीं होता है।

प्रश्न 139 – शास्त्र के अनुसार द्रव्यलिङ्गी कहे कि एक -एक द्रव्य अलग-अलग है और प्रत्येक द्रव्य, एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित बिराज रहा है तो उसका ज्ञान सच्चा होगा या नहीं ?

उत्तर – अपनी आत्मा का ज्ञान न होने से, शास्त्र के अनुसार कहने पर भी मिथ्यादृष्टियों का सब ज्ञान, मिथ्याज्ञान और सब चारित्र, मिथ्याचारित्र है।

प्रश्न 140 – अपना ज्ञान हुए बिना, मिथ्यादृष्टि का सब ज्ञान मिथ्या है – ऐसा कहाँ आया है ?

उत्तर – भगवान उमास्वामी ने तत्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय के 32वें सूत्र में कहा है कि 'सद् सतोर विशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत्', अर्थात् (1) सत् = विद्यमान वस्तु। (2) असत् = अविद्यमान् वस्तु (3) अविशेषात् = इन दोनों का यथार्थ विवेक ना होने से (यदृच्छ) विपर्यय, उपलब्धे = अपनी मनमानी इच्छा अनुसार कल्पनाएँ करने से वह ज्ञान, मिथ्याज्ञान है। (4) 'उन्मत्तवत्' शराब पिये हुए के समान मिथ्यादृष्टि को कारणविपरीतता, स्वरूपविपरीतता और भेदाभेद-विपरीतता तीनों बर्तती हैं; इसलिए मिथ्यादृष्टि का सब ज्ञान, झूठा है।

प्रश्न 141 – मिथ्यादृष्टि का सर्व ज्ञान, झूठा है, तब उसे सच्चा करने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर – सच्चे धर्म की यह परिपाटी है कि पहले जीव, सम्यक्त्व प्रगट करता है, पश्चात् व्रतरूप शुभभाव होते हैं और सम्यक्त्व स्व–पर का श्रद्धान होने पर होता है; स्व–पर का श्रद्धान, द्रव्यानुयोग का अभ्यास करने से होता है; इसलिए पहले जीव को द्रव्यानुयोग के अनुसार श्रद्धा करके सम्यग्दृष्टि होना चाहिए, तब मिथ्यादृष्टि का सर्व ज्ञान, जो मिथ्यात्व अवस्था में झूठा था; सम्यक्त्व होने पर उसका सारा ज्ञान सच्चा हो जाता है।

प्रश्न 142 – बिस्तरा किस–किस अपेक्षा क्या–क्या है ?

उत्तर – (1) समानजातीयद्रव्यपर्याय है। (2) पहिले, जीव के साथ सम्बन्ध होने से असमानजातीयद्रव्यपर्याय है। (3) आकार की अपेक्षा विचार किया जावे तो विभावव्यंजनपर्याय है। (4) रङ्ग की अपेक्षा विचार किया जाए तो विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 143 – बिस्तरा, समानजातीयद्रव्यपर्याय कब कहा जा सकता है ?

उत्तर – 'बिस्तरा' में आहारवर्गणा के जितने परमाणु हैं, वे सब परमाणु, एक–एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहे हैं; इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है; मैं तो ज्ञायक भगवान हूँ – ऐसा जिसको अपना ज्ञान हो, वह जीव 'बिस्तरा' को समानजातीयद्रव्यपर्याय कह सकता है, क्योंकि उसे भेदविज्ञान है।

प्रश्न 144 – मनुष्य क्या है ?

उत्तर – असमानजातीयद्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 145 – मनुष्य असमानजातीयद्रव्यपर्याय कब कहा जा सकता है और कौन कह सकता है ?

उत्तर – (1) 'मनुष्य' – आत्मा, ज्ञायकस्वभावी है। पर्याय में

मूर्खता है और मूर्खता एक समय की है। यह अपने ज्ञायकस्वभावी आत्मा का आश्रय ले, तो मूर्खता उसी समय दूर हो जाती है। (2) औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कर्माणशरीर, भाषा और मन में एक-एक परमाणु, अपनी एक-एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है। आत्मा से इन सबका निश्चय-व्यवहार से कोई सम्बन्ध नहीं है। (3) जो ऐसा जानता हो और अपनी आत्मा का अनुभव हो तो उसका कथन 'मनुष्य' असमानजातीयद्रव्यपर्याय है - कहा जावेगा।

प्रश्न 146 - श्री भावपाहुड़, गाथा 114 के भावार्थ में असमानजातीयद्रव्यपर्याय के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर - स्त्री आदि पदार्थ के ऊपर से भेदज्ञानी का विचार — इसका उदाहरण इस प्रकार है कि जब स्त्री आदि इन्द्रियगोचर हों (दिखायी दे), तब उसके विषय में तत्त्वविचार करना, कि यह स्त्री है, वह क्या है ? जीव नामक तत्त्व की (असमानजातीय) एक पर्याय है। इसका शरीर है, वह तो पुद्गलतत्त्व की पर्याय है। यह हाव-भाव चेष्टा करती है, वह इस जीव के विकार हुआ है, यह आस्रवतत्त्व है और बाह्य चेष्टा पुद्गल की है। इस विकार से इस स्त्री की आत्मा के कर्म का बन्ध होता है। यह विकार इसके न हो तो 'आस्रव-बन्ध' इसके न हो। कदाचित् मैं भी इसको देखकर विकाररूप परिणमन करूँ तो मेरे भी 'आस्रव-बन्ध' हो; इसलिए मुझे विकाररूप न होना, यह 'संवरतत्त्व' है। बन सके तो कुछ उपदेश देकर इसका विकार दूर करूँ (ऐसा विकल्प, राग है) यह राग भी करने योग्य नहीं है - स्वसम्मुख ज्ञातापने में धैर्य रखना योग्य है। इस प्रकार तत्त्व को भावना से अपना भाव अशुद्ध नहीं होता है। इसलिए जो दृष्टिगोचर पदार्थ (समानजातीय-असमानजातीय) हों, उनमें इस

प्रकार तत्त्व की भावना रखना, यह तत्त्व की भावना का उपदेश है।

प्रश्न 147 – श्री प्रवचनसार, गाथा 94 में असमानजातीय-द्रव्यपर्याय के विषय में भगवान कुन्दकुन्दस्वामी ने क्या बताया है?

उत्तर – जो अज्ञानी संसारी जीव, मनुष्यादि असमानजातीयपर्यायों में लवलीन हैं, वे परसमय में रागयुक्त हैं – ऐसा भगवन्त जिनेन्द्रदेव ने कहा है।

इसी गाथा की टीका में कहा है कि — 'मैं मनुष्य हूँ; शरीरादि की समस्त क्रियाओं को मैं करता हूँ; स्त्री-पुत्र धनादि के ग्रहण-त्याग का मैं स्वामी हूँ' इत्यादि मानना, सो मनुष्यव्यवहार (मनुष्यरूप प्रवृत्ति) है। जो मनुष्यादि असमानजातीयद्रव्यपर्यायों-समानजातीय-द्रव्यपर्यायों में लीन हैं; वे एकान्तदृष्टिवाले लोग, मनुष्यव्यवहार का आश्रय करते हैं। इसलिए रागी-द्वेषी होते हैं। उन्हें नपुंसक कहा है।

प्रश्न 148 – श्री प्रवचनसार, गाथा 154 में भगवान कुन्दकुन्दस्वामी ने असमानजातीय और समानजातीयद्रव्यपर्याय के विषय में क्या बताया है?

उत्तर – जो पुरुष, उस पूर्व कथित द्रव्य के स्वरूपअस्तित्व कर संयुक्त और द्रव्य -गुण-पर्याय अथवा उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य ऐसे तीन प्रकार कहे हुए द्रव्य के निज लक्षण को भेदसहित जानता है, वह भेदज्ञानी, अपने से भिन्न अचेतनद्रव्यों में मोह को प्राप्त नहीं होता है। इसी गाथा की टीका में कहा है –

मनुष्य-देव इत्यादि अनेक द्रव्यात्मक असमानजातीयद्रव्यपर्यायों में भी, जीव का स्वरूप-अस्तित्व और प्रत्येक परमाणु का स्वरूप-अस्तित्व सर्वथा भिन्न-भिन्न है। सूक्ष्मता से देखने पर वहाँ जीव

और पुद्गल का स्वरूप-अस्तित्व, अर्थात् अपने-अपने द्रव्य-गुण -पर्याय और ध्रौव्य-उत्पाद-व्यय, स्पष्टतया भिन्न-भिन्न जाना जा सकता है। स्व-पर का भेदविज्ञान करने के लिए जीव के इस स्वरूप अस्तित्व को पद-पद पर लक्ष्य में लेना योग्य है। यथा - यह जानने में आता हुआ चेतन द्रव्य-गुण पर्याय और चेतन ध्रौव्य-उत्पाद -व्यय जिसका स्वभाव है - ऐसा मैं (भगवान आत्मा) इस पुद्गल से भिन्न रहा और यह अचेतन द्रव्य-गुण-पर्याय और अचेतन ध्रौव्य -उत्पाद-व्यय जिसका स्वभाव है - ऐसा पुद्गल, मुझ भगवान आत्मा से भिन्न रहा; इसलिए मुझे पर के प्रति मोह नहीं है। यह स्व-पर का भेद है।

प्रश्न 149 - यह नींबू का पेड़ है - इस वाक्य पर किस-किस अपेक्षा कौन-कौन सी पर्याय घटित हो सकती है और कब ?

उत्तर - (1) नींबू का पेड़ - असमानजातीयद्रव्यपर्याय है, कब ? जबकि - ऐसा जाने कि नींबू का पेड़ में एक ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी जीवतत्त्व है; जीव के संयोगरूप औदारिक-तैजस -कार्माणशरीररूप अनन्त पुद्गल परमाणु, यह अजीवतत्त्व हैं। वह अपने को भूलकर, इन अनन्त पुद्गल परमाणुओं में एकत्वबुद्धि से पागल है - यह आस्रव-बन्धतत्त्व है - ऐसा जाननेवाला ज्ञानी, नींबू के पेड़ को असमानजातीयद्रव्यपर्याय कह सकता है।

(2) पेड़ से तोड़ने पर नींबू - समानजातीयद्रव्यपर्याय है। कब ? जबकि ऐसा जाने (अ) नींबू में आहारवर्गणा के अनेक परमाणु हैं। एक-एक परमाणु का, दूसरे परमाणुओं में अत्यन्ताभाव है और नींबू का स्कन्धरूप पर्याय में प्रत्येक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

(आ) प्रत्येक परमाणु में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी एक-एक विभावव्यंजनपर्याय और अनन्त विभाव-अर्थपर्यायों सहित विराज रहा है। (इ) जब परमाणुओं की एक पुद्गल जाति होते हुए भी, परस्पर में किसी भी प्रकार का कर्ता -भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, तब मुझ चेतन जीवतत्त्व के साथ नींबू का सम्बन्ध कैसे हो सकता हैं ? कभी नहीं हो सकता है। ऐसा ज्ञान वर्ते तो ज्ञानी के कथन को, नींबू पेड़ से टूटने पर, समानजातीय-द्रव्यपर्याय है - ऐसा कहा जाता है।

(3) गोल नींबू, आकार की अपेक्षा विभावव्यंजनपर्याय कहा जाता है। कब ? जबकि ऐसा जाने - गोल नींबू में जितने परमाणु हैं, उतने एक-एक प्रदेशी विभावव्यंजनरूप अनन्त रूपी आकार हैं। अनन्त रूपी आकारों से मेरा किसी भी अपेक्षा, किसी भी प्रकार का कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जानकर, निज चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी, एक आकाररूप स्वभाव का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे, तब गोल नींबू को विभावव्यंजनपर्याय कह सकता है।

(4) खट्टा नींबू - रस की अपेक्षा विभावअर्थपर्याय है। कब ? जब ऐसा जाने कि नींबू में जितने परमाणु हैं, उतनी खट्टारूप रस की विभावअर्थपर्यायें हैं। नींबू के खट्टे रस की पर्यायों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जानकर निज अरसस्वभावी ज्ञायक जीवतत्त्व का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे, तब खट्टा नींबू को, यह विभावअर्थपर्याय हैं - ऐसा कह सकता है।

प्रश्न 150 - 'औपशामिकसम्यक्त्व' क्या है ? इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - (1) औपशमिकसम्यक्त्व, जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की स्वभावअर्थपर्याय है। (2) इसका कर्ता, जीव का श्रद्धागुण है। (3) दर्शनमोहनीय का उपशम, इसका कर्ता नहीं है।

प्रश्न 151 - 'सम्यग्ज्ञान' क्या है ? इसका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - (1) सम्यग्ज्ञान, जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की स्वभाव-अर्थपर्याय है। (2) इसका कर्ता, आत्मा का ज्ञानगुण है। (3) ज्ञानावरणीयकर्म का क्षयोपशम तथा देव-शास्त्र-गुरु, इसके कर्ता नहीं हैं।

प्रश्न 152 - (1) सम्यक्चारित्र, (2) तैजसशरीर, (3) सिद्धदशा, (4) कम्पन क्या है ? (5) वीर्य की पूर्णता, (6) यथाख्यातचारित्र, (7) पाँच इन्द्रियों के भोग का भाव, (8) फूल में सुगन्ध, (9) बुखार, (10) खाँसी की आवाज, (11) आठों कर्मों का उदय क्या है ? इनका कर्ता कौन है और कौन नहीं है ? (12) मोहनीयकर्म का उपशम क्या है ? (13) मतिज्ञान क्या है ?

उत्तर - उक्त सभी प्रश्नों के उत्तर पूर्व प्रश्नों के अनुसार घटित करें।

प्रश्न 153 - द्रव्यसंग्रह में पुद्गल की पर्यायें किसे कहा है ?

उत्तर - श्री द्रव्यसंग्रह, गाथा 16 में (1) शब्द, (2) बन्ध, (3) सूक्ष्म, (4) स्थूल, (5) संस्थान (आकार), (6) भेद (खण्ड), (7) तम (अन्धकार), (8) छाया, (9) उद्योत, (10) आताप आदि को पुद्गल की पर्यायें कहा है और ये सब समानजातीयद्रव्यपर्यायें हैं और जिसमें जीव का एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध है, वह असमान-जातीयद्रव्यपर्यायें हैं।

प्रश्न 154 – ज्ञानगुण की पर्यायें कितनी और कौन-कौनसी हैं ?

उत्तर – ज्ञानगुण की आठ पर्यायें हैं । मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान, केवलज्ञान, ये पाँच सम्यक्‌पर्यायें हैं। कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, ये तीन मिथ्यापर्याय हैं।

प्रश्न 155 – इन ज्ञानगुण की आठ पर्यायों के जानने से ज्ञानी-अज्ञानी को क्या-क्या लाभ या नुकसान है ?

उत्तर – (1) जिसमें त्रिकाल ज्ञानगुण हैं, ऐसे अभेद आत्मा का आश्रय लेकर मिथ्यापर्यायों का अभाव करके, सम्यक्‌पर्यायों को उत्पन्न करना, यह प्रथम इनको जानने का लाभ पात्र जीवों को होता है। (2) ज्ञानी अपने अभेद ज्ञानस्वरूप का आश्रय बढ़ाकर, केवलज्ञान प्राप्त करता है। (3) मिथ्यादृष्टि, ज्ञान की आठ पर्यायों को जानकर, शास्त्राभिनिवेश करता है, जो अनन्त संसार का कारण है।

प्रश्न 156 – दर्शनगुण की पर्यायें कितनी हैं और कौन-कौनसी हैं ?

उत्तर – चार हैं – चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवल-दर्शन।

प्रश्न 157 – दर्शनगुण की इन पर्यायों को जानकर पात्र जीव क्या करता है; ज्ञानी क्या करता है और अज्ञानी क्या करता है ?

उत्तर – पात्र जीव इन चार पर्यायों से लक्ष्य हटाकर, अपने दर्शनरूप अभेदस्वभाव की दृष्टि करके सच्चा क्षयोपशम प्राप्त करता है। (1) ज्ञानी, निज अभेद दर्शनस्वभाव का पूर्ण आश्रय लेकर, पर्याय में केवलदर्शन की प्राप्ति करता है। (2) अज्ञानी इन चार पर्यायों को जानकर शास्त्राभिनिवेश में पागल बना रहता है।

प्रश्न 158 – चारित्रगुण का परिणमन कितने प्रकार का है ?

उत्तर – शुद्ध और अशुद्ध दो प्रकार का है; तथा अशुद्ध के शुभ और अशुभ दो प्रकार हैं।

प्रश्न 159 – चारित्रगुण के परिणमन को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – पर्याय में अशुद्धपरिणमन है; स्वभाव में शुद्ध और अशुद्ध का भेद नहीं है – ऐसा जानकर, अभेदस्वभाव का आश्रय लेकर, अशुद्धपरिणमन का अभाव और शुद्धपरिणमन की प्राप्ति, इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न 160 – स्पर्श क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 161 – स्पर्शगुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – हल्का-भारी, ठण्डा-गरम, रूखा-चिकना, कड़ा-नरम – ये आठ पर्यायें हैं।

प्रश्न 162 – स्पर्शगुण की आठ पर्यायों के जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – यह आठों पर्यायें, पुद्गल के स्पर्शगुण की हैं। अनादि से अज्ञानी, अपने को हल्का-भारी; मुझे गर्मी-सर्दी का बुखार आदि मिथ्यामान्यता से पागल हो रहा था। तब सद्गुरु ने कहा तू तो अस्पर्शस्वभावी भगवान आत्मा है; हल्का-भारी आदि पुद्गल के स्पर्शगुण की पर्यायें हैं – ऐसा जानकर, अस्पर्शस्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले, तो स्पर्श की आठ पर्यायों से सम्बन्ध नहीं है, यह अनुभव होना, यह स्पर्श की आठ पर्यायों को जानने से लाभ है।

प्रश्न 163 – रस क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 164 – रसगुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – पाँच हैं – खट्टा, मीठा, कडुवा, कषायला, और चरपरा।

प्रश्न 165 – रसगुण की पाँच पर्यायों को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – अज्ञानी जीव, अनादि से खट्टे-मीठे को अपना स्वाद मान रहा था। सद्गुरु ने कहा – तू तो अरसस्वभावी भगवान आत्मा है और खट्टा-मीठा आदि पुद्गल के रसगुण की पर्यायें हैं, तेरा इनसे सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानकर, अरसस्वभावी भगवान आत्मा की ओर दृष्टि दे, तो रस की पाँच पर्यायों को जाना कहा जाएगा।

प्रश्न 166 – गन्ध क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 167 – गन्धगुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – दो हैं – सुगन्ध, और दुर्गन्ध।

प्रश्न 168 – गन्धगुण की दो पर्यायों को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – मैं, अगन्धस्वभावी भगवान आत्मा हूँ; सुगन्ध-दुर्गन्ध, पुद्गल के गन्धगुण की पर्यायें हैं। ऐसा जानकर, अगन्धस्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय ले तो धर्म की शुरुआत होकर फिर क्रम से वृद्धि होकर निर्वाण का पात्र बने।

प्रश्न 169 – वर्ण क्या है ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 170 – वर्णगुण की कितनी पर्यायें हैं ?

उत्तर – पाँच हैं – काला, पीला, नीला, लाल, सफेद।

प्रश्न 171 – वर्णगुण की पाँच पर्यायों को जानने से क्या लाभ हैं ?

उत्तर – मैं, अवर्णस्वभावी भगवान आत्मा हूँ। काला–पीला आदि पुद्गल के वर्णगुण की पर्यायें हैं; इससे मेरा सर्वथा सम्बन्ध नहीं है। ऐसा जानकर, अपने अवर्णस्वभाव का आश्रय ले तो वर्णगुण की पर्यायों से भेदज्ञान हुआ, कहा जावेगा, तभी मुक्तिमार्ग प्रारम्भ होगा।

प्रश्न 172 – शब्द क्या है ?

उत्तर – भाषावर्गणा का कार्य है और समानजातीयद्रव्यपर्याय है; जीव के संयोग की अपेक्षा विचारा जावे तो असमानजातीयद्रव्य-पर्याय है।

प्रश्न 173 – शब्द कितने प्रकार का है ?

उत्तर – सात प्रकार का है। षडज, ऋषभ, गन्धार, मध्यम, पञ्चम, थैवत, और निषाद।

प्रश्न 174 – सात प्रकार के शब्द को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर – सात प्रकार के शब्दों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं अशब्दस्वभावी भगवान आत्मा हूँ। ऐसा जानकर, अपना आश्रय ले, तो शान्ति प्राप्त हो और कर्ण इन्द्रियों के विषयों की एकत्वबुद्धि का अभाव हो।

प्रश्न 175 – समयसार की 49वीं गाथा में जीव का स्वरूप कैसा बताया है ?

उत्तर –

'जीव चेतना गुण, शब्द-रस-रूप-गन्ध-व्यक्ति विहीन है।'
निर्दिष्ट नहीं संस्थान उसका, ग्रहण है नहिं लिंग से॥

अर्थात्, हे भव्य! तू जीव को रसरहित, रूपरहित, गन्धरहित, इन्द्रियगोचर नहीं, शब्दरहित है –ऐसा जान। वह चेतनागुण द्वारा दृष्टि में आता है, किसी पर चिह्नों से, किसी के आकार से दृष्टि में नहीं आ सकता है।

प्रश्न 176 – गाथा 49 में जीव को स्पर्शादि से रहित क्यों कहा है?

उत्तर – स्पर्श-रसादि की सत्ताईस पर्यायों में जीव पागल है, उससे दृष्टि हटाकर अपने स्वभाव पर दृष्टि दे; इसलिए कहा है।

प्रश्न 177 – गाथा 49 की टीका में स्पर्श-रस आदि के कितने-कितने बोल दिये हैं और उनमें क्या-क्या समझाया है?

उत्तर – रस, रूप, गन्ध, स्पर्श और शब्द – प्रत्येक के छह-छह बोलों से इनका निषेध करके, आत्मा को अरस, अरूप, अगन्ध, अस्पर्श, अशब्द बताया है, क्योंकि अज्ञानी, पुद्गल की इन सत्ताईस पर्यायों में पागल है। उसका पागलपन मिटे और शान्ति प्राप्त हो, यह समझाया है।

प्रश्न 178 – गाथा 49 की टीका में छह-छह बोलों से अलग किया है, उसका एक उदाहरण बताओ, ताकि सब समझ में आ सके?

उत्तर – (1) पुद्गलद्रव्य से अलग किया है। (2) पुद्गलद्रव्य के गुण से अलग किया है। (3) पुद्गलद्रव्य की पर्याय, द्रव्येन्द्रिय के आलम्बन से अलग किया है। (4) क्षयोपशमरूप ज्ञान से अलग

किया है। (5) अखण्डपने सबको सर्वथा जाननेवाला स्वभाव होने से मात्र रस को जाने, इससे अलग किया है। (6) रससम्बन्धी ज्ञान होने पर भी, रसरूप नहीं होता है। इस प्रकार आत्मा को इन सबसे पृथक् बताकर, चेतनागुण के द्वारा ही अनुभव में आता है – ऐसा बताया है। इसलिए हे आत्मा! तू 'एक टंकोत्कीर्ण परमार्थस्वरूप का आश्रय ले तो शान्ति प्रगटे।'

प्रश्न 179 – क्रियावतीशक्ति क्या है ?

उत्तर – जीव और पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 180 – क्रियावतीशक्ति का परिणमन कितने प्रकार का है ?

उत्तर – दो प्रकार का है – गमनरूप और स्थिररूप।

प्रश्न 181 – क्रियावतीशक्ति को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर – (1) अज्ञानी, अनादि से यह मानता था कि मैं शरीर को चलाता हूँ और शरीर मुझे चलाता है। (2) गुरुगम के बिना, शास्त्र पढ़ा तो कहने लगा – धर्मद्रव्य, जीव-पुद्गल को चलाता है और अधर्मद्रव्य, ठहराता है। (3) सच्चे सद्गुरु का समागम हुआ तो जाना कि – आत्मा में और प्रत्येक परमाणु में क्रियावतीशक्ति गुण है। ये दोनों अपनी-अपनी योग्यता से चलते हैं और ठहरते हैं; धर्म-अधर्म तो निमित्तमात्र है – ऐसा जानकर, अपनी ओर दृष्टि दे तो क्रियावतीशक्ति को जाना।

प्रश्न 182 – वैभाविकशक्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर – यह एक विशेष भाववाला गुण है। जिस गुण के कारण, परद्रव्य के सम्बन्धपूर्वक स्वयं अपनी योग्यता से अशुद्धपर्याय होती है।

प्रश्न 183 – वैभाविकशक्ति कितने द्रव्यों में हैं ?

उत्तर – जीव और पुद्गल, दो द्रव्यों में ही है।

प्रश्न 184 – वैभाविकशक्ति की शुद्धपर्याय कब प्रगट होती है ?

उत्तर – सिद्धदशा में इस गुण की शुद्ध–स्वाभाविकदशा प्रगट होती है।

प्रश्न 185 – प्रत्येक गुण में कितनी पर्यायें होती हैं ?

उत्तर – तीन काल के जितने समय हैं, उतनी–उतनी ही पर्याय प्रत्येक गुण में होती हैं।

प्रश्न 186 – एक गुण में एक पर्याय का व्यय, एक पर्याय का उत्पाद और स्वयं ध्रौव्य, इन तीनों में कितना समय लगता है ?

उत्तर – मिथ्यात्व का अभाव, सम्यक्त्व की उत्पत्ति और श्रद्धा–गुण ध्रौव्य, यह एक समय में ही होता है। ऐसा ही प्रत्येक गुण में अनादि–अनन्त होता है। यह वस्तु का स्वभाव है।

प्रश्न 187 – उत्पाद–व्यय–ध्रौव्य का एक ही समय है या भिन्न–भिन्न समय है ?

उत्तर – तीनों एक ही समय में एक साथ बर्तते हैं।

प्रश्न 188 – अज्ञान दूर होकर, सच्चा ज्ञान होने में कितना काल लगता है ?

उत्तर – एक समय ही लगता है। मिथ्याज्ञान का व्यय, सम्यग्ज्ञान का उत्पाद और ज्ञानगुण, ध्रौव्य है।

प्रश्न 189 – अनादि–अनन्त कौन है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य और उनके गुण अनादि–अनन्त होते हैं।

प्रश्न 190 – प्रत्येक द्रव्य और गुण अनादि-अनन्त हैं, इसे जानने से क्या नुकसान और क्या लाभ हैं।

उत्तर – (1) परद्रव्य और उनके गुण अनादि-अनन्त हैं, उनका आश्रय माने तो चारों गतियों में घूमकर निगोद की प्राप्ति होती है। (2) अपना द्रव्य और गुण अनादि-अनन्त हैं, उसका आश्रय ले तो मोक्ष की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 191 – सादि-अनन्त कौन है ?

उत्तर – क्षायिकपर्याय, सादि-अनन्त है।

प्रश्न 192 – पर्याय तो कोई भी हो, एक समयमात्र की होती है, फिर आपने क्षायिकपर्याय को 'सादि-अनन्त' क्यों कहा ?

उत्तर – वह बदलने पर भी, जैसी की तैसी रहती है; वह की वह नहीं। 'जैसी की तैसी', अर्थात् शुद्ध-शुद्ध रहने से सादि-अनन्त कहा है।

प्रश्न 193 – क्षायिकपर्याय, सादि-अनन्त है, इसे जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – अपने द्रव्य-गुण अभेद अनादि-अनन्त स्वभाव का आश्रय लेकर, क्षायिकपर्याय प्रगट करनेयोग्य है – ऐसा जानकर, क्षायिकपर्याय प्रगट करे, यह लाभ है।

प्रश्न 194 – अनादि-सान्त क्या है ?

उत्तर – जो जीव, अनादि-अनन्त अपने स्वभाव का आश्रय लेता है, उस जीव का संसार जो अनादि से है, उसको सांत कर देता है; इसलिए संसारपर्याय को अनादि-सांत कहा है।

प्रश्न 195 – सादि-सांत क्या है ?

उत्तर – मोक्षमार्ग, अर्थात् साधकदशा।

प्रश्न 196 – मोक्षमार्ग, सादि-सांत है – इसे जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर – (1) ज्ञानी जीव, साधकदशा का अभाव करके साध्यदशा, जो सादि-अनन्त है, उसको प्रगट करते हैं। (2) अज्ञानी पात्र जीव, अपने स्वभाव का आश्रय लेकर सादि-सांत मोक्षमार्ग प्रगट करें, यह जानने का लाभ है।

प्रश्न 197 – समयसार का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – समयसार का कर्ता, शब्दों की अपेक्षा भाषावर्गणा और पुस्तक की अपेक्षा आहारवर्गणा है। श्री कुन्दकुन्दभगवान, अमृतचन्द्राचार्य भगवान और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 198 – रोटी का कर्ता कौन है और कौन नहीं ?

उत्तर – रोटी का कर्ता, आहारवर्गणा है। बाई, चकला, बेलन, तथा और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 199 – शब्द का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – शब्द का कर्ता, भाषावर्गणा है; जीव और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 200 – मन का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – मन का कर्ता, मनोवर्गणा है; जीव और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 201 – अलमारी का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – अलमारी का कर्ता, आहारवर्गणा है। बढ़ई, औजार, और दूसरी वर्गणाएँ नहीं हैं।

प्रश्न 202 - (1) सम्यग्दर्शन, (2) सम्यग्ज्ञान, (3) सम्यकचारित्र, (4) केवलज्ञान, (5) केवलदर्शन, (6) पलंग, (7) मीठाआम, (8) तैजसशरीर, (9) कार्माणशरीर, (10) ज्ञानावरणीयकर्म का क्षायोपशम, (11) दिव्यध्वनि, (12) रसगुल्ला, (13) दान का भाव आदि का (अ) कर्ता कौन है ? (आ) कर्ता कौन नहीं है ? (इ) यह क्या है ? (ई) पर्याय को कब माना ? (उ) और पर्याय को कब नहीं माना ?

उत्तर - (अ) सम्यग्दर्शन का कर्ता, आत्मा का श्रद्धागुण है, (आ) और कोई दूसरा गुण, कर्म या विकार नहीं है, (इ) यह पर्याय है (ई) श्रद्धागुण में से आयी, तब पर्याय को माना (उ) कहीं और से आयी - ऐसा माने तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार शेष प्रश्नों पर स्वयं लगायें।

प्रश्न 203 - समानजातीयद्रव्यपर्यायों के नाम शास्त्रों में कहाँ आये हैं और उनके कुछ नाम बताओ ?

उत्तर - द्रव्यसंग्रह के अजीव अधिकार में तथा तत्त्वार्थसूत्र में आये हैं। शब्द, बन्ध, स्थूल, संस्थान, तम, छाया आताप, उद्योत इत्यादि हैं।

प्रश्न 204 - आहारकशरीर; तैजसशरीर; कार्माणशरीर; वैक्रियकशरीर; औदारिकशरीर, (1) वह क्या है, (2) इनका कर्ता कौन है, (3) इनका कर्ता कौन नहीं है, (4) पर्याय को कब माना, (5) पर्याय को कब नहीं माना, इत्यादि प्रश्नों के उत्तर दो ?

उत्तर - (1) आहारकशरीर, मुनि की अपेक्षा विचार करें तो असमानजातीयद्रव्यपर्याय है और शरीर की अपेक्षा विचार करें तो

समानजातीयद्रव्यपर्याय है। (2) इसका कर्ता, आहारवर्गणा है। (3) ऋद्धिधारी मुनि और दूसरी वर्गणाएँ इसका कर्ता नहीं हैं। (4) आहारकशरीर का कर्ता, आहारवर्गणा है, तब पर्याय को माना और (5) आहारकशरीर का कर्ता, मुनि को माने या दूसरी वर्गणाओं को माने तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार बाकी के प्रश्नों पर स्वयं घटित करें।

प्रश्न 205 – (1) मतिज्ञान, (2) श्रुतज्ञान, (3) चक्षुदर्शन, (4) अवग्रह, (5) ध्वनि, (6) छाया, (7) मिथ्यादर्शन, (8) मिथ्याज्ञान, (9) मिथ्याचारित्र, (10) क्रोध, (11) लोभ, (12) दया, (13) दान का भाव आदि का (अ) कर्ता कौन हैं ? (आ) कर्ता कौन नहीं है ? (इ) यह क्या है ? (ई) पर्याय को कब माना ? (उ) और पर्याय को कब नहीं माना ?

उत्तर – (अ) मतिज्ञान का कर्ता, आत्मा का ज्ञानगुण है, (आ) और कोई दूसरा गुण, कर्म या विकार नहीं है, (इ) यह पर्याय है, (ई) ज्ञानगुण में से आयी, तब पर्याय को माना, (उ) कही ओर से आयी – ऐसा माने तो पर्याय को नहीं माना। इसी प्रकार शेष प्रश्नों का उत्तर स्वयं दें।

प्रश्न 206 – द्रव्य की पर्याय कितनी बड़ी है ?

उत्तर – जितना बड़ा द्रव्य है, उतनी ही बड़ी उसकी पर्याय है। जैसे– आत्मा असंख्यात प्रदेशी है, वैसे ही असंख्यात प्रदेशी उसके गुण और पर्यायें हैं।

प्रश्न 207 – प्रत्येक पर्याय की स्थिति कितनी है ?

उत्तर – कोई भी पर्याय हो, उसकी स्थिति एक समयमात्र ही होती है।

प्रश्न 208 - (1) शक्कर में मीठापना, (2) बर्फ, (3) अन्धेरा, (4) उजाला, (5) समवसरण, (6) बादलों में रंग का बदलना, (7) मेघगर्जना, (8) स्याही, (9) शीशे का प्रतिबिम्ब, यह क्या-क्या हैं ?

उत्तर - (1) शक्कर = पुद्गलद्रव्य के रसगुण की विभाव-अर्थपर्यायें है। (2) बर्फ = पुद्गलद्रव्य के स्पर्शगुण की शीतल विभावअर्थपर्याय है। (3) अन्धेरा = पुद्गल के वर्णगुण की विभाव-अर्थपर्याय है। (4) उजाला = पुद्गल के वर्णगुण की विभाव-अर्थपर्याय है। (5) समवसरण = पुद्गल के प्रदेशत्वगुण की विभाव-व्यंजनपर्याय है। (6) बादलों के रंग = पुद्गल के वर्णगुण की विभाव-अर्थपर्याय है। (7) मेघगर्जना= भाषावर्गणा के शब्दरूप समानजातीयद्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 209 - क्या द्रव्य-गुण-पर्याय, तीनों सत् हैं ?

उत्तर - हाँ, तीनों सत् हैं; द्रव्य-गुण त्रिकाल सत् हैं और पर्याय, एक समय का सत् है।

प्रश्न 210 - वर्तमान में अज्ञान दूर होकर, सच्चा ज्ञान होने में कितना समय लगता है ?

उत्तर - एक समय लगता है।

प्रश्न 211 - द्रव्य की भूतकाल की पर्यायों की संख्या अधिक है या भविष्यकाल की पर्यायों की संख्या अधिक है ?

उत्तर - द्रव्य की भूतकाल की पर्यायें अनन्त हैं और भविष्य की पर्यायें उनसे भी अनन्त गुनी अधिक हैं।

प्रश्न 212 - ज्ञानगुण और दर्शनगुण की पर्यायों के नाम बताओ ?

उत्तर - (1) मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्याय, केवलज्ञान, कुमति, कुश्रुत, कुअवधि, ये ज्ञानगुण की आठ पर्यायें हैं। (2) चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवलदर्शन - ये दर्शनगुण की चार पर्यायें हैं।

प्रश्न 213 - गुणपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर - गुण के द्वारा पर्याय में अनेकपने की प्रतिपत्ति, वह गुणपर्याय है।

प्रश्न 214 - गुणपर्याय के कितने भेद हैं?

उत्तर - दो भेद हैं - (1) स्वभावपर्याय, और (2) विभावपर्याय।

प्रश्न 215 - स्वभावपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर - गुण की जो शुद्धपर्याय होती है, उसे स्वभावपर्याय कहते हैं - जैसे, केवलज्ञान, केवलदर्शन, क्षायिकसम्यक्त्व आदि।

प्रश्न 216 - द्रव्यपर्याय किसे कहते हैं?

उत्तर - अनेक द्रव्यात्मक एकता की प्रतिपत्ति के कारणभूत द्रव्यपर्याय है, अर्थात् अनेक द्रव्यों में जिससे एकपने का ज्ञान हो, वह द्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 217 - उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य जानने के लिए श्री प्रवचनसार की किस-किस गाथा का विशेषरूप से रहस्य जानना चाहिए?

उत्तर - श्री प्रवचनसार, गाथा 99, 100 तथा 101 का रहस्य जानना चाहिए।

प्रश्न 218 - श्री प्रवचनसार की 99वीं गाथा का क्या रहस्य है - संक्षिप्त में बताइये?

उत्तर - सब द्रव्य, सत् हैं। उत्पाद-व्यय-ध्रुवसहित परिणाम

प्रत्येक द्रव्य का स्वभाव है। ऐसे स्वभाव में निरन्तर वर्तता हुआ होने से द्रव्य भी उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला है। ऐसा गाथा में सिद्ध किया है। टीका में पाँच बातें की हैं। (1) द्रव्य में अभेदरूप से अनादि-अनन्त प्रवाह की एकता बतायी और प्रवाहक्रम के सूक्ष्म अंश, वह परिणाम हैं, यह बताया है। (2) प्रवाहक्रम में प्रवर्तता परिणाम का परस्पर व्यतिरेक बताया। (3) सम्पूर्णरूप से द्रव्य के त्रिकाली परिणामों को उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यरूप सिद्ध किया। दृष्टान्त में द्रव्य के सब प्रदेशों को क्षेत्र अपेक्षा, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य बताया। (4) एक ही परिणाम में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यपना बताया है। दृष्टान्त में एक-एक प्रदेश में क्षेत्र अपेक्षा के प्रवाह में द्रव्य सदा वर्तता है, यह वस्तु का स्वभाव है - यह सिद्ध किया है।

प्रश्न 219 - श्री प्रवचनसार की 100वीं गाथा में क्या बताया है?

उत्तर - उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य एक दूसरे के बिना होते नहीं हैं, परन्तु एक ही साथ तीनों होते हैं; जैसे - आत्मा में सम्यक्त्व का उत्पाद; मिथ्यात्व के व्यय बिना नहीं होता है; मिथ्यात्व का नाश, सम्यक्त्व के उत्पाद बिना नहीं होता; और सम्यक्त्व का उत्पाद तथा मिथ्यात्व का व्यय, यह दोनों आत्मा की ध्रुवता बिना होते नहीं है। इस प्रकार प्रत्येक वस्तु में और उसके गुणों में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य तीनों एक ही साथ होते हैं, यह बताया है।

प्रश्न 220 - श्री प्रवचनसार, गाथा 101 में क्या बताया है?

उत्तर - (1) उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य किसके हैं? पर्याय के हैं। (2) पर्याय किसमें होती है? द्रव्य में होती; इस प्रकार सबको एक द्रव्य में ही बताया है, बाहर नहीं।

प्रश्न 221 – बाई ने रोटी बनायी – इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाकर इससे होनेवाला लाभ बताओ ?

उत्तर – रोटी का उत्पाद, लोई का व्यय, आहारवर्गणा ध्रौव्य है – तो बाई ने रोटी बनायी, यह बुद्धि उड़ गयी। इसी प्रकार विश्व में प्रत्येक कार्य ऐसे ही होता है, होता रहा है, और होता रहेगा – ऐसा मानते ही दृष्टि, स्वभाव पर जाए तो धर्म की प्राप्ति होना, इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न 222 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाकर इससे होनेवाला लाभ बताओ ?

उत्तर – घड़े का उत्पाद, पिण्ड का व्यय, आहारवर्गणा के स्कन्ध मिट्टी ध्रौव्य है; कुम्हार, चाक, कीली, डण्डे से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 223 – केवलज्ञानावरणीय के अभाव से केवलज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाकर इससे होनेवाला लाभ बताओ ?

उत्तर – केवलज्ञान का उत्पाद, भावश्रुतज्ञान का व्यय, आत्मा का ज्ञानगुण, ध्रौव्य है; केवलज्ञानावरणीय के अभाव से केवलज्ञान हुआ, यह दृष्टि छूट गयी।

प्रश्न 224 – मुझे आँख से ज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और इससे क्या लाभ रहा ?

उत्तर – मिथ्यात्व का उत्पाद, मिथ्यात्वरूप पहली पर्याय का व्यय, आत्मा का श्रद्धागुण, ध्रौव्य है। दर्शनमोहनीय के उदय से हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 225 – मुझे आँख से ज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – ज्ञानपर्याय का उत्पाद; पूर्व की ज्ञानपर्याय का व्यय; आत्मा का ज्ञानगुण, ध्रौव्य है; आँख से ज्ञान हुआ – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 226 – दर्शनमोहनीय के उदय से मिथ्यात्व होता है, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – मिथ्यात्व का उत्पाद; मिथ्यात्वरूप पूर्व पर्याय का व्यय; आत्मा का श्रद्धागुण, ध्रौव्य है; दर्शनमोहनीय के उदय से मिथ्यात्व हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 227 – कर्म, संसार-परिभ्रमण कराता है, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – संसार-परिभ्रमण का उत्पाद, पूर्व की पर्याय का व्यय; आत्मा, ध्रौव्य है; कर्म, संसार-परिभ्रमण कराता है, ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 228 – भगवान की वाणी सुनकर सम्यक्तव हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – सम्यक्त्व का उत्पाद; मिथ्यात्व का व्यय; आत्मा का श्रद्धागुण, ध्रौव्य है; भगवान की वाणी सुनकर सम्यक्त्व हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 229 – मैंने रोटी खायी, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – रोटी खायी का उत्पाद; पहली पर्याय का व्यय; आहार -वर्गणा के स्कन्ध, ध्रौव्य हैं; जीव ने रोटी खायी – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 230 – धर्मद्रव्य ने मुझे चलाया, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – मेरे चलने का उत्पाद; स्थिररूप पर्याय का व्यय; आत्मा की क्रियावतीशक्तिगुण, ध्रौव्य है; धर्मद्रव्य तथा शरीर ने मुझे चलाया, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 231 – निमित्त-नैमित्तिक की चर्चा सुनकर सम्यग्ज्ञान हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – सम्यग्ज्ञान का उत्पाद; मिथ्याज्ञान का व्यय; आत्मा का ज्ञानगुण, ध्रौव्य है; सुनकर सम्यग्ज्ञान हुआ, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 232 – मैंने पानी गरम किया, इसमें उत्पाद-व्यय -ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – गरम का उत्पाद; ठण्डे का व्यय; आहारवर्गणारूप पानी, ध्रौव्य है; जीव और आग ने पानी गरम किया – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 233 – श्री कुन्दकुन्दभगवान ने समयसारशास्त्र बनाया, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – समयसारशास्त्र का उत्पाद; पूर्व पर्याय का व्यय; आहारवर्गणारूप पत्र, ध्रौव्य हैं; श्री कुन्दकुन्दभगवान ने बनाया – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 234 – मैंने पुस्तक उठायी, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और क्या लाभ रहा ?

उत्तर – पुस्तक उठने का उत्पाद; स्थिररूप पर्याय का व्यय; आहारवर्गणारूप कागज की क्रियाशक्तिगुण, ध्रौव्य है; जीव ने पुस्तक उठायी – ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 235 – अधर्मद्रव्य ने मुझे ठहराया, इसमें उत्पाद-व्यय -ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर - मेरे ठहरने का उत्पाद; चलने की पर्याय का व्यय; जीव की क्रियावतीशक्ति, ध्रौव्य है; अधर्मद्रव्य और शरीर ने मुझे ठहराया - ऐसी बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 236 - बढ़ई ने रथ बनाया, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर - रथ बनने का उत्पाद; पूर्व पर्याय का व्यय; आहार-वर्गणारूप लकड़ी, ध्रौव्य है; बढ़ई ने रथ बनाया, यह बुद्धि उड़ गयी।

प्रश्न 237 - अन्तरायकर्म के क्षयोपशम से वीर्य में क्षयोपशम उत्पन्न हुआ, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ और लाभ बताओ ?

उत्तर - क्षयोपशम का उत्पाद; पहली पर्याय का व्यय; आत्मा का वीर्यगुण, ध्रौव्य है; अन्यरायकर्म के क्षयोपशम से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 238 - पर्याय को कब जाना ?

उत्तर - अपने स्वभाव का आश्रय लिया, तो पर्याय को जाना।

●●

18

चार अभाव : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ

प्रश्न 1 – अभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक पदार्थ का, दूसरे पदार्थ में अस्तित्व न होने को अभाव कहते हैं।

प्रश्न 2 – अभाव, अभावरूप है या सद्भावरूप हैं ?

उत्तर – अभाव, सद्भावरूप हैं क्योंकि इनकी सत्ता है।

प्रश्न 3 – अभाव के कितने भेद हैं ?

उत्तर – चार भेद हैं। (1) प्रागभाव, (2) प्रध्वंसाभाव, (3) अन्योन्याभाव, और (4) अत्यन्ताभाव।

प्रश्न 4 – प्रागभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का, उसी द्रव्य की पूर्व पर्याय में अभाव, वह प्रागभाव है। (वर्तमान, भूतकाल में नहीं था)

प्रश्न 5 – प्रध्वंसाभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य की वर्तमान पर्याय का, उसी द्रव्य की भविष्य की पर्याय में अभाव, वह प्रध्वंसाभाव है। (वर्तमान, भविष्यकाल में नहीं होगा।)

प्रागभाव – प्रध्वंसाभाव का स्पष्टीकरण :—

प्रश्न 6 – अवाय में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – अवाय का, ईहा में अभाव, प्रागभाव है और अवाय का,

धारणा में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 7 – क्षायोपशमिकसम्यक्त्व में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – क्षायोपशमिकसम्यक्त्व का, औपशमिकसम्यक्त्व में अभाव, प्रागभाव है और क्षायोपशमिकसम्यक्त्व का, क्षायिकसम्यक्त्व में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 8 – लड्डू में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – लड्डू का, पूर्व की पर्याय में अभाव, प्रागभाव है और लड्डू का, भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 9 – भावश्रुतज्ञान में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – भावश्रुतज्ञान का, मतिज्ञान में अभाव, प्रागभाव है और भावश्रुतज्ञान का, केवलज्ञान में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 10 – केवलज्ञान में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – केवलज्ञान का, भावश्रुतज्ञान में अभाव, प्रागभाव है और केवलज्ञान का, भविष्य के केवलज्ञान में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 11 – दही में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – दही का, दूध में अभाव, प्रागभाव है और दही का, छाछ में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 12 – रोटी में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – रोटी का, लोई में अभाव, प्रागभाव है और रोटी का, वमन में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 13 – सिद्धदशा में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – सिद्धदशा का, संसारदशा में अभाव, प्रागभाव है और सिद्धदशा का, भविष्य की सिद्धदशा में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 14 – शब्द में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – शब्द का, पूर्व पर्याय में अभाव, प्रागभाव है और शब्द का, भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 15 – औपशमिकसम्यक्त्व में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – औपशमिकसम्यक्त्व का, मिथ्यात्व में अभाव, प्रागभाव है और औपशमिकसम्यक्त्व का, क्षायोपशमिकसम्यक्त्व में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 16 – ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम में प्रागभाव -प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम का, ज्ञानावरणीयकर्म के उदय में अभाव, प्रागभाव है और ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम का, केवलज्ञानावरणीयकर्म के क्षय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 17 – दर्शनमोहनीय के उपशम में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – दर्शनमोहनीय के उपशम का, दर्शनमोहनीय के उदय में अभाव, प्रागभाव है और दर्शनमोहनीय के उपशम का, दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 18 – रसगुल्ला में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – रसगुल्ले का, रसगुल्ले की पूर्व पर्याय में अभाव, प्रागभाव है और रसगुल्ले का, भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 19 –अपूर्वकरण में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – अपूर्वकरण का, अध:करण में अभाव, प्रागभाव है और अपूर्वकरण का, अनिवृत्तिकरण में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 20– अन्तरात्मा में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव किस प्रकार है ?

उत्तर – अन्तरात्मा का, बहिरात्मने में अभाव, प्रागभाव है और अन्तरात्मा का, परमात्मापने में अभाव, प्रध्वंसाभाव है।

अन्योन्याभाव का स्पष्टीकरण :—

प्रश्न 21 – अन्योन्याभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव, वह अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 22– एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्याय में अभाव, वह अन्योन्याभाव है, इसे स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर – जैसे : दूध, दही और मट्ठा, यह तीनों वर्तमान वस्तुएँ कहलाती हैं; यह तीनों पुद्गलद्रव्य की अलग-अलग वर्तमान पर्यायें हैं; इनमें अभाव, अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 23– अन्योन्याभाव के दृष्टान्त देकर समझाओ ?

उत्तर – जैसे, बाई ने रोटी बनायी, तो रोटी का तो बाई के साथ अत्यन्ताभाव है, परन्तु क्या हाथ, चकला, बेलन, तवे ने रोटी बनायी ?

नहीं! क्योंकि हाथ, चकला, बेलन, रोटी – ये सब पुद्गलद्रव्य की वर्तमान अवस्थाएँ हैं; इनमें अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 24– छप्पर को दीवार का आधार है – इसमें अन्योन्या–भाव को कब नहीं माना और कब माना ?

उत्तर – छप्पर और दीवार दोनों अलग–अलग पुद्गलों की वर्तमान अवस्थाएँ हैं; इनमें अभाव, वह अन्योन्याभाव है। छप्पर को दीवार का आधार है – ऐसा माने तो अन्योन्याभाव को नहीं माना और दोनों अलग–अलग वर्तमान पर्यायें हैं, आपस में सम्बन्ध नहीं है – तो अन्योन्याभाव को माना।

प्रश्न 25 – तैजसशरीर और कार्माणशरीर में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – ये दोनों, पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 26 – घड़ा–चाक–डण्डा में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – इन तीनों पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 27– किताब–हाथ–पैन में कौन–सा अभाव है ?

उत्तर – इन तीनों पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 28 – हाथ–स्टूल–औजार में कौनसा अभाव है ?

उत्तर – इन तीनों पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है।

अत्यन्ताभाव का स्पष्टीकरण :

प्रश्न 29 – अत्यन्ताभाव किसे कहते हैं ?

उत्तर – एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य में (त्रिकाल) अभाव, वह अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 30 – कुम्हार और घड़े में कौनसा अभाव है ?

उत्तर - कुम्हार और घड़े में अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 31 - बाई और रोटी में कौनसा अभाव है?

उत्तर - अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 32 - दो परमाणुओं में कौनसा अभाव है?

उत्तर - अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 33 - अध्यापक और किताब में कौनसा अभाव है?

उत्तर - अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 34 - भगवान और दिव्यध्वनि में कौनसा अभाव है?

उत्तर - अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 35 - गुरु और गुरु के शब्द में कौनसा अभाव है?

उत्तर - अत्यन्ताभाव है।

कौनसा अभाव किसमें..........

प्रश्न 36 - अन्योन्याभाव कितने द्रव्यों में लागू होता है?

उत्तर - परस्पर पुद्गलद्रव्यों की वर्तमान पर्यायों में ही लागू होता है, अलग द्रव्यों में नहीं।

प्रश्न 37 - अत्यन्ताभाव कितने द्रव्यों में लगता है?

उत्तर - छहों द्रव्यों में लगता है।

प्रश्न 38 - चारों अभाव किस-किस द्रव्य में लग सकते हैं?

उत्तर - पुद्गल में चारों अभाव लग सकते हैं; बाकी द्रव्यों में तीन अभाव लगते हैं।

प्रश्न 39 - जीव-धर्म-अधर्म-आकाश और काल में कौनसा अभाव नहीं लगता है?

उत्तर - अन्योन्याभाव नहीं लगता है, क्योंकि अन्योन्याभाव,

मात्र पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों में ही परस्पर में लगता है।

प्रश्न 40 – इन चार अभावों में से पर्यायसूचक कौन–कौन से अभाव हैं ?

उत्तर – प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव पर्यायसूचक हैं।

प्रश्न 41 – इन चार अभावों में से द्रव्यसूचक कौन–कौन से अभाव हैं ?

उत्तर – मात्र अत्यन्ताभाव ही द्रव्यसूचक है।

प्रश्न 42 – प्रागभाव कितने द्रव्यों में लागू होता है ?

उत्तर – छहों द्रव्यों–गुणों की वर्तमान पर्याय का, भूत की पर्यायों में लागू होता है।

प्रश्न 43 – प्रध्वंसाभाव कितने द्रव्यों में लागू होता है ?

उत्तर – छहों द्रव्यों–गुणों की वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में लागू होता है।

प्रश्न 44 – यदि प्रागभाव न माने तो क्या होगा ?

उत्तर – कार्य, अनादि का सिद्ध होगा।

प्रश्न 45 – यदि प्रध्वंसाभाव न माने तो क्या होगा ?

उत्तर – कार्य, अनन्त काल तक रहेगा।

प्रश्न 46 – यदि अन्योन्याभाव न माने तो क्या होगा ?

उत्तर – एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का, दूसरे पुद्गल की वर्तमानपर्याय में अभाव है, वह नहीं रहेगा, अर्थात् सब पुद्गलों की पर्यायें मिलकर एक हो जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा।

प्रश्न 47 – अत्यन्ताभाव न माने तो क्या होगा ?

उत्तर – प्रत्येक पदार्थ की भिन्नता नहीं रहेगी। जगत के सर्व द्रव्य एकरूप होने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा।

चार अभाव : परिज्ञान के लाभ

प्रश्न 48 – प्रागभाव से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है ?

उत्तर – अनादि काल से जीव अज्ञान, मिथ्यात्व और रागादि नए–नए दोष करता आ रहा है; उसने धर्म कभी नहीं किया, तो भी वर्तमान में नए पुरुषार्थ से धर्म कर सकता है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का, पूर्व पर्याय में अभाव बर्तता है। प्रागभाव समझने से 'मैं पापी हूँ, मैंने बहुत पाप किए हैं, मैं कैसे तिर सकता हूँ' आदि हीनभावना निकल जाती है।

प्रश्न 49 – आत्मा, अनादि से केवलज्ञानपर्यायमय है – ऐसा माननेवाला कौन सा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता, क्योंकि केवलज्ञान में ज्ञानगुण की पर्याय है; अतः केवलज्ञान होने से पूर्व की, मतिज्ञानादि पर्यायों में केवलज्ञान का अभाव है।

प्रश्न 50 – 'आत्मा, अनादि से सम्यग्दर्शनपर्यायमय है' – ऐसा माननेवाला कौनसा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता, क्योंकि सम्यग्दर्शन, श्रद्धागुण की पर्याय है; अतः सम्यग्दर्शन होने से पूर्व की मिथ्यात्वादि पर्यायों में, सम्यग्दर्शन का अभाव है।

प्रश्न 51 – आत्मा, अनादि से यथाख्यातचारित्रमय है – ऐसा माननेवाला कौनसा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता, क्योंकि यथाख्यातचारित्र, चारित्रगुण की पर्याय है; अतः यथाख्यातचारित्र होने से पूर्व की, सकलचारित्र आदि पर्यायों में, यथाख्यातचारित्र का अभाव है।

प्रश्न 52 – 'आत्मा, अनादि से केवलदर्शनपर्यायमय है' – ऐसा माननेवाला कौन सा अभाव नहीं मानता ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता क्योंकि केवलदर्शन, दर्शनगुण की पर्याय है; अत: केवलदर्शन होने से पूर्व की, अचक्षुदर्शनादि पर्यायों में, केवलदर्शन का अभाव है।

प्रश्न 53 – आत्मा, अनादि से सम्यग्ज्ञानपर्यायमय है – ऐसा माननेवाला कौनसा अभाव नहीं मानता?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं मानता क्योंकि सम्यग्ज्ञान, ज्ञानगुण की पर्याय है; अत: सम्यग्ज्ञान होने से पूर्व की, मिथ्याज्ञानादि पर्यायों में, सम्यग्ज्ञान का अभाव है।

प्रश्न 54 – प्रध्वंसाभाव से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है?

उत्तर – वर्तमान अवस्था में धर्म नहीं किया है, फिर भी जीव, नवीन पुरुषार्थ से अधर्मदशा का तुरन्त ही अभाव करके, अपने में सत्य धर्म प्रगट कर सकता है। वर्तमान में कैसी भी हीनदशा हो, भविष्य में उत्तम से उत्तमदशा प्रगट हो सकती है क्योंकि वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है। प्रध्वंसाभाव के परिज्ञान से वर्तमान पामरता देखकर, भविष्य के प्रति निराश न होकर स्वसन्मुख होने का पुरुषार्थ प्रगट करने का उत्साह जागृत होता है। कोई कहे – मैंने तो बहुत पाप किए हैं, आगे पाप का उदय आ गया तो क्या होगा? भगवान कहते हैं कि भाई! वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्याय में अभाव है; तू स्वभाव का आश्रय लेकर तुरन्त धर्म कर! देर मत कर!

प्रश्न 55 – 'यह वर्तमान राग, मुझे जीवनभर परेशान करेगा' –ऐसा माननेवाले ने कौनसा अभाव नहीं माना?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव नहीं माना क्योंकि वर्तमान राग का, भविष्य की चारित्रगुण की पर्यायों में अभाव है; अत: वर्तमान राग, भविष्य के सुख–दु:ख का कारण नहीं हो सकता।

प्रश्न 56– 'यह वर्तमान पाप, मुझे जीवनभर परेशान करेगा' – ऐसा माननेवाले ने कौन–सा अभाव नहीं माना ?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव को नहीं माना क्योंकि वर्तमान पाप का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है; अतः वर्तमान पाप, भविष्य की परेशानी का कारण नहीं हो सकता।

प्रश्न 57 – 'इस वर्तमान अज्ञानदशा का कभी अभाव नहीं होगा' – ऐसा माननेवाले ने कौन–सा अभाव नहीं माना ?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव को नहीं माना क्योंकि वर्तमान अज्ञानदशा का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है; अतः वर्तमान अज्ञानदशा, भविष्य के ज्ञान–अज्ञान का कारण नहीं हो सकती।

प्रश्न 58 – 'यह वर्तमान मिथ्यात्वभाव, मुझे हमेशा संसार परिभ्रमण करायेगा' – ऐसा माननेवाले ने कौन सा अभाव नहीं माना ?

उत्तर – प्रध्वंसाभाव को नहीं माना क्योंकि वर्तमान मिथ्यात्वभाव का, भविष्य की पर्यायों में अभाव है; अतः वर्तमान मिथ्यात्वभाव, भविष्य के सम्यक्त्व–मिथ्यात्व का कारण नहीं हो सकता है।

प्रश्न 59 – अन्योन्याभाव समझने से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है ?

उत्तर – एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय, दूसरे पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय में कुछ नहीं कर सकती है। जब पुद्गल की अवस्था, सजाति में कुछ नहीं कर सकती है तो पुद्गल, जीव का कुछ भी लाभ–हानि कैसे कर सकता है ? अर्थात्, कुछ नहीं कर सकता।

प्रश्न 60 – अत्यन्ताभाव समझने से धर्मसम्बन्धी क्या लाभ है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य का, दूसरे द्रव्य में त्रिकाल अभाव है; इसलिए एक द्रव्य, अन्य द्रव्य का कुछ भी नहीं कर सकता है – ऐसा समझने से 'दूसरे मेरा बुरा–भला कर देंगे' ऐसी पर में अपनेपने की भावना समाप्त हो जाती है।

प्रश्न 61 – सबसे पहले कौन से अभाव को जानना चाहिए ?

उत्तर – वैसे तो चारों अभाव जानना चाहिए। मुख्यरूप से प्रथम अत्यन्ताभाव को, फिर अन्योन्याभाव को, फिर बाकी दो अभावों को समझकर स्व–सन्मुख होना चाहिए।

प्रश्न 62 – चार अभावों को समझने से हमारा कल्याण कैसे हो ? सरल शब्दों में समझाइये।

उत्तर – (1) मैं ज्ञायकस्वभावी आत्मा, अनन्त गुणों का पिण्ड हूँ। मुझ निज ज्ञायकस्वभावी भगवान से भिन्न, दूसरे अनन्त जीव, अनन्तानन्त पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश एक–एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं, इनसे मेरा किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है; इसलिए हटाओ दृष्टि, अत्यन्त भिन्न परपदार्थों– शरीर मन, वाणी से।

(2) जब एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय, दूसरे पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में कुछ नहीं कर सकती है तो आठ कर्म, मुझे दुःख –सुख देंगे –ऐसी बुद्धि का अभाव हो जाना चाहिए, तो दृष्टि हटाओ द्रव्यकर्मों से।

(3) अब विचारो! पर से और द्रव्यकर्म से तो सम्बन्ध ही नहीं रहा। अब अपनी आत्मा की ओर देखो — तुम्हारी जो वर्तमान पर्याय है, उसका भूतकाल की पर्याय से कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि जब वह है ही नहीं – तो दृष्टि उठावो पिछली पर्यायों से।

(4) भविष्य की पर्याय अभी आयी ही नहीं। अब तुम अपनी वर्तमान ज्ञान की पर्याय को कहाँ ले जाओगे ? पर, द्रव्यकर्म, भूत

और भविष्य की पर्यायों से तो सम्बन्ध रहा ही नहीं - तो एकमात्र जो अपना ज्ञायकस्वभाव है, उस पर दृष्टि देवें तो सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है।

चार अभाव : प्रयोगात्मक प्रश्नोत्तर

प्रश्न 63 - मैं सुबह उठा, अत्यन्ताभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन में अनन्त पुद्गल परमाणु हैं; उनकी क्रियावतीशक्ति की उस समय पर्याय की योग्यता से शरीर उठा। औदारिक आदि शरीर के उठने का, मुझ ज्ञान-दर्शन-उपयोगमयी निज जीवतत्त्व से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है - ऐसा अनुभव-ज्ञान वर्ते तो अत्यन्ताभाव को माना; और (2) संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मनरूप अनन्त पुद्गलों के उठने से मैं (आत्मा) उठा — ऐसी मान्यतावाले ने अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्रश्न 64 - संयोगरूप अनन्त पुद्गलों के उठने को 'मैं (आत्मा) सुबह उठा' - इस मान्यता का क्या फल है ?

उत्तर - चारों गतियों में घूमकर निगोद, इस मान्यता का फल है।

प्रश्न 65 - संयोगरूप शरीर के उठने को, मैं (आत्मा) सुबह उठा -इस मान्यतारूप निगोदबुद्धि का अभाव कैसे हो, तब अत्यन्ताभाव को माना कहा जावे ?

उत्तर - संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन में जितने परमाणु हैं, वे सब क्रियावतीशक्ति की उस समय की पर्याय की योग्यता से उठे हैं। मुझ ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का, संयोगरूप शरीर के उठने से किसी भी प्रकार का, किसी भी अपेक्षा कर्ता-भोक्ता का सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि शरीर के उठने का और

मुझ ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी निज जीवतत्त्व का, द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है - ऐसा जानकर, निज जीवतत्त्व की ओर दृष्टि करे तो निगोदबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति हो; तब अत्यन्ताभाव को माना। फिर अनुपचरितअसद्भूतव्यवहारनय से 'मैं सुबह उठा' - ऐसा कहा जा सकता है।

प्रश्न 66 - कोई चतुर कहे — संयोगरूप शरीर के उठने का तो आत्मा से सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि आत्मा का संयोगरूप शरीरों में अत्यन्ताभाव है, परन्तु द्रव्यकर्म के कारण तो शरीर उठा है न?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन में जितने परमाणु हैं, उन सब परमाणुओं की स्कन्धरूप अवस्था में, एक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है; इसलिए द्रव्यकर्म के कारण शरीर उठा — ऐसी मान्यतावाले ने अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 67 - संयोगरूप शरीर के उठने के कार्य में अन्योन्याभाव को माना कब कहा जाए?

उत्तर - जब संयोगरूप औदारिक-तैजस-कार्माण-भाषा-मन में अनन्त पुद्गलों की स्कन्ध अवस्था में, एक परमाणु की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है क्योंकि पुद्गलों की वर्तमान परस्पर अवस्थाओं में अन्योन्याभाव है, तब जीव के साथ संयोगरूप शरीर के उठने का सम्बन्ध कैसे हो सकता है? कभी भी नहीं हो सकता है। ऐसा जाने-माने तो अन्योन्याभाव को माना।

प्रश्न 68 - शरीर के उठने का, आत्मा से अन्यन्ताभाव है और संयोगरूप स्कन्धों में एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय का,

दूसरे पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है - तो संयोगरूप औदारिक शरीर कैसे उठा ?

उत्तर - संयोगरूप औदारिकशरीर में उठनेरूप अवस्था का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही है क्योंकि संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप वर्तमान पर्याय का, भूत की लेटनेरूप पर्यायों में प्रागभाव है और संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में प्रध्वंसाभाव है। इसलिए यह सिद्ध हुआ कि संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप पर्याय का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 69 - संयोगरूप औदारिकशरीर के उठनेरूप अवस्था का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही क्यों है; परद्रव्य, भूत-भविष्य की पर्याय क्यों नहीं हैं ?

उत्तर - इसलिए कि (1) कार्य का सच्चा कारण परद्रव्य तो हो ही नहीं सकता है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव पृथक्-पृथक् है और एक द्रव्य का, दूसरे द्रव्यों में अत्यन्ताभाव है। (2) शरीर के उठनेरूप उस समय पर्याय की योग्यता का, पूर्व पर्याय भी कारण नहीं हो सकती है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का, भूत की पर्यायों में प्रागभाव है। (3) शरीर के उठनेरूप उस समय पर्याय की योग्यता का, भविष्य की पर्याय भी कारण नहीं हो सकती है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्यायों में प्रध्वंसाभाव है।

प्रश्न 70 - शरीर के उठनेरूप कार्य का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता ही है, इसे मानने-जानने से क्या सिद्ध हुआ ?

उत्तर - जैसे, संयोगरूप औदारिकशरीर के उठने का कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता से ही हुआ है; वैसे ही विश्व में जितने भी

कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता से होते रहे हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे – यह सिद्ध हुआ।

प्रश्न 71 – विश्व में सभी कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से ही होते रहे हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे –इससे मानने–जानने से क्या लाभ हुआ, तब चारों अभावों को माना कहा जावे ?

उत्तर – ऐसा मानते ही पर में करूँ–करूँ की खोटी बुद्धि का अभाव हो जाता है; धर्म की प्राप्ति कर, क्रम से निर्वाण को प्राप्त करना – यह चारों अभावों के जानने का लाभ है।

प्रश्न 72 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इस वाक्य में चार अभाव किस प्रकार हैं ?

उत्तर – (1) घड़े का हाथ–डण्डा–कीली–चाक–डोरी में अभाव, अन्योन्याभाव है; (2) घड़े का भूत काल की पिण्ड पर्याय में अभाव, प्रागभाव है; (3) घड़े का भविष्य की पर्याय में अभाव, प्रध्वंसाभाव है और कुम्हार तथा घड़े में अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 73 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इस वाक्य में किस मान्यतावाले ने चार अभावों को नहीं माना ?

उत्तर – (1) कुम्हार ने घड़ा बनाया — ऐसी मान्यतावाले ने अत्यन्ताभाव को नहीं माना। (2) कुम्हार की आत्मा से तो घड़ा नहीं बना, परन्तु हाथ, चाक, डोरी ने तो घड़ा बनाया –ऐसी मान्यतावाले ने अन्योन्याभाव को नहीं माना। (3) घड़ा बना – उसमें भूतकाल की पिण्ड पर्याय ने कुछ तो किया –इस मान्यतावाले ने प्रागभाव को नहीं माना। (4) घड़ा बना – उसमें भविष्य की पर्याय का भी कुछ सम्बन्ध है – ऐसी मान्यतावाले ने प्रध्वंसाभाव को नहीं माना।

प्रश्न 74 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – इस वाक्य में चार अभाव को कब माना ?

उत्तर - घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता से ही बना है; घड़ा बनने में कुम्हार-चाक-डोरी आदि का तथा भूत काल की पर्याय और भविष्य की पर्यायों का सम्बन्ध नहीं है - ऐसा माननेवाले ने चार अभावों को माना।

प्रश्न 75 - कुम्हार ने घड़ा बनाया - इस वाक्य में चार अभावों को मानने से क्या-क्या लाभ होता है?

उत्तर - (1) संसार के पाँच कारणों का तथा पंच परावर्तन का अभाव हो जाता है; (2) पंच परमेष्टियों में उसकी गिनती होने लगती है; (3) पंचम पारिणामिकभाव का महत्त्व आ जाता है; (4) चारों गतियों के अभावरूप मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है; और (5) आठों कर्मों का अभाव हो जाता है।

चार अभाव : भ्रान्तियों का निराकरण

प्रश्न 76 - कोई चतुर कहता है कि द्रव्य में द्रव्य-गुण-पर्याय तीन बातें होती हैं; पर्याय में प्रागभाव-प्रध्वंसाभाव आ गया; द्रव्य में अत्यन्ताभाव आ गया; एक द्रव्य के गुणों में आपस में अन्योन्याभाव आ गया; - क्या उनका ऐसा कहना ठीक है?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि (1) प्रत्येक द्रव्य में द्रव्य-गुण-पर्याय होती है। एक द्रव्य के गुण और उनकी वर्तमान पर्यायों में इन चार अभावों का कोई सम्बन्ध नहीं है। (2) द्रव्य की वर्तमान पर्याय का, भूतकाल की पर्यायों में प्रागभाव है और वर्तमान पर्याय का, भविष्य काल की पर्यायों में प्रध्वंसाभाव है। (3) द्रव्य का गुणों के साथ, नित्यतादात्म्यसम्बन्ध होने से, एक द्रव्य के गुणों का, दूसरे द्रव्य के गुणों के साथ अत्यन्ताभाव है। (4) अब जो वर्तमान में पुद्गलस्कन्ध हैं; अज्ञानी उस स्कन्ध को ही द्रव्य मानता है। अज्ञानी को मिथ्याबुद्धि हटाने के लिए, प्रत्येक स्कन्ध में भी प्रत्येक परमाणु

की वर्तमान पर्याय का, दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है - ऐसा बताना चार अभावों का तात्पर्य है। (5) एक द्रव्य के गुणों का आपस में अन्योन्याभाव मानना, वह जिनमत से बाहर है।

प्रश्न 77 - अन्योन्याभाव की क्या आवश्यकता थी ?

उत्तर - जैसे, सुनार ने जेवर बनाया तो सुनार का जेवर में तो अत्यन्ताभाव हो गया। इसके बदले काई कहे, सुनार ने तो नहीं बनाया परन्तु हाथ-हथौड़ा आदि से तो बना तो उससे कहते हैं कि भाई! पुद्गलों की वर्तमान पर्यायों का परस्पर में अभाव है - ऐसा अन्योन्याभाव बताता है। जब एक पुद्गल की वर्तमान पर्याय, दूसरे पुद्गलों की वर्तमान पर्याय में कुछ नहीं कर सकती है तो, तू तो विजातीय है, यह बताने के लिए अन्योन्याभाव को बताने की आवश्यकता थी।

प्रश्न 78 - जीव, दूसरे का तो न करे परन्तु पुद्गल तो पुद्गल का करता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; ऐसी मान्यतावालों ने अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 79 - जीव से तो भाषा नहीं निकली, परन्तु होंठ से तो निकली है न ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; ऐसी मान्यतावालों ने अन्योन्याभाव को नहीं माना, क्योंकि होंठ, आहारवर्गणा के और भाषा, भाषावर्गणा के स्कन्ध हैं।

प्रश्न 80 - चार अभावों का स्वरूप किस शास्त्र में आया है ?

उत्तर - सभी शास्त्रों में है परन्तु विशेषरूप से 'आप्तमीमांसा' में

आचार्य समन्तभद्रस्वामी ने श्लोक 9, 10, 11 में बताया है – जो इस प्रकार है। –

भावैकान्तै पदार्थानाम भावानाम पन्हवात।
सर्वात्मकमनाद्यन्तम स्वरूपमता वकम्॥9॥

अर्थ :— हे भगवान! पदार्थों का सर्वथा सद्भाव ही मानने पर, अभावों का अभाव (लोप) मानना होगा। इस प्रकार अभावों को नहीं मानने से, सर्व पदार्थ सर्वात्मक हो जावेंगे। सभी अनादि व अनन्त हो जाएँगे; किसी का कोई पृथक् स्वरूप ही न रहेगा, जो कि आपको स्वीकार नहीं है।

कार्य द्रव्यमनादि स्यात् प्रागभावस्य निन्हवे।
प्रध्वंसस्य च धर्मस्य प्रच्यवेऽनन्तां व्रजेत्॥10॥

अर्थ :— प्रागभाव का अभाव मानने पर, समस्त कार्य (पर्यायें) अनादि हो जाएँगे। इसी प्रकार प्रध्वंसाभाव नहीं मानने पर, सभी कार्य (पर्यायें) अनन्त हो जाएँगे।

सर्वात्मकं तदेकं स्यादन्यायोह व्यतिक्रमे।
अन्यत्र समवाये न व्यपदिश्येत सर्वथा॥11॥

अर्थ :— यदि अन्योन्याभाव को नहीं मानेंगे तो दृश्यमान सर्व पदार्थ (पुद्गल) वर्तमान में एकरूप हो जाएँगे और अत्यन्ताभाव न मानने पर, सर्व द्रव्य त्रिकाल एकरूप हो जाने से, किसी भी द्रव्य का व्यपदेश (कथन) भी नहीं बन सकेगा।

प्रश्न 81 – सातावेदनीयकर्म से पैसा आता है – कौन से अभाव को नहीं माना?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 82 – नामकर्म से शरीर की रचना होती है – ऐसी मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 83 – आत्मा ने तो सन्दूक नहीं उठाया, परन्तु हाथों ने तो उठाया – ऐसी मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 84 – मैं रोटी खाता हूँ — इस मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्रश्न 85 – शरीर, रोटी खाता हूँ — ऐसी मान्यतावाले ने कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 86 – मैं उठा — किस अभाव को भूलता है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 87 – शरीर ने कुर्ता पहना – किस अभाव को भूलता है ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को भूलता है।

प्रश्न 88 – मेरा मकान है – किस अभाव को भूलता है ?

उत्तर –अत्यन्ताभाव को भूलता है।

जय महावीर – जय महावीर

(19)

अभ्यास : छह सामान्यगुण, चार अभाव का संक्षिप्त स्पष्टीकरण

प्रश्न 1 – मैंने लड्डु खाया, इस वाक्य में अस्तित्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) तराजू के एक पलड़े में निज चैतन्य अरूपी आत्मा, अपने अस्तित्वगुण से अस्तित्वरूप है। तराजू के दूसरे पलड़े में औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु में जड़, रूपी एक प्रदेशी अनन्त पुद्गलद्रव्य, अपने-अपने अस्तित्वगुण से अस्तित्वरूप हैं। मुझ चैतन्य अरूपी आत्मा के एक अस्तित्व का, औदारिक आदि जड़ रूपी पुद्गलों के अस्तित्वों से, सर्वथा सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जाने-माने तो अस्तित्वगुण को माना, और (2) निज चैतन्य अरूपी आत्मा के एक अस्तित्व को भूलकर, लड्डु आदि जड़, रूपी पुद्गलों के अनन्त अस्तित्वों में — मैंने लड्डु खाया, तो अस्तित्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 2 – वस्तुत्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) एक तरफ मुझ चैतन्य अरूपी आत्मा, वस्तुत्वगुण के कारण देखने-जाननेरूप अपनी प्रयोजनभूत क्रिया कर रहा है। दूसरी तरफ औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु में जड़ रूपी एक प्रदेशी अनन्त पुद्गलद्रव्य अपने-अपने वस्तुत्वगुण के कारण, अपनी-अपनी प्रयोजनभूत क्रिया कर रहे हैं। एक का, दूसरे

की प्रयोजनभूत क्रिया से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जाने-माने तो वस्तुत्वगुण को माना, और (2) मुझ निज आत्मा की देखने -जाननेरूप प्रयोजनभूत क्रिया को भूलकर, लड्डु आदि पुद्गलों की प्रयोजनभूतक्रिया में — मैंने लड्डु खाया, तो वस्तुत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 3 - द्रव्यत्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) एक तरफ मुझ चैतन्य अरूपी निज भगवान आत्मा, द्रव्यत्वगुण के कारण, देखने-जाननेरूप निरन्तर नया-नया कार्य कर रहा है। दूसरी तरफ औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु में जड़ रूपी एक-एक प्रदेशी अनन्त पुद्गलद्रव्य, अपने-अपने द्रव्यत्वगुण के कारण, निरन्तर नया-नया परिणमन कर रहे हैं। एक दूसरे के निरन्तर नये-नये परिणमन से, एक दूसरे का सर्वथा सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जाने-माने तो द्रव्यत्वगुण को माना, और (2) निज आत्मा के देखने-जाननेरूप निरन्तर नये-नये परिणमन को भूलकर, औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु के निरन्तर नये-नये परिणमन में—मैंनें लड्डु खाया, तो द्रव्यत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 4 - प्रमेयत्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु में जड़ रूपी एक प्रदेशी अनन्त पुद्गलद्रव्य, प्रमेयत्वगुण के कारण व्यवहार से ज्ञेय और मुझ निज आत्मा ज्ञायक; ज्ञानपर्याय ज्ञेय और मुझ निज आत्मा, ज्ञायक, परन्तु ऐसे भेद से भी कोई सिद्धि नहीं हैं; परमार्थ से मैं ज्ञायक, ज्ञायक - ऐसा जाने-माने तो प्रमेयत्वगुण को माना, और (2) निज आत्मा, ज्ञायक-ज्ञेयसम्बन्ध को भूलकर, मैंने लड्डु खाया तो प्रमेयत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 5 - अगुरुलघुत्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) मुझ चैतन्य अरूपी निज भगवान आत्मा का, तथा औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु के जड़ रूपी अनन्त पुद्गलद्रव्यों से अगुरुलघुत्वगुण के कारण, सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव सर्वथा भिन्न-भिन्न है - ऐसा जाने-माने तो अगुरुलघुत्वगुण को माना, और (2) निज ज्ञायक भगवान आत्मा के स्वचतुष्टय को भूलकर, औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु आदि के अनन्त पुद्गलद्रव्यों के अनन्त चतुष्टयों में — मैंने लड्डु खाया, तो अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 6 - प्रदेशत्वगुण को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) मुझ चैतन्य अरूपी असंख्या प्रदेशी एक आकार का, औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु के जड़ रूपी एक प्रदेशी पुद्गल के अनन्त आकारों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है - ऐसा जाने-माने तो प्रदेशत्वगुण को माना, और (2) निज चैतन्य अरूपी असंख्यात प्रदेशी एक आकार को भूलकर, औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु के जड़ रूपी एक प्रदेशी पुद्गल के अनन्त आकारों में — मैंने लड्डु खाया, तो प्रदेशत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 7 - मैंने लड्डु खाया- इस वाक्य में - अत्यन्ताभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) मुझ चैतन्य अरूपी निज ज्ञायक भगवान आत्मा का, औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु आदि के परमाणुओं से अत्यन्ताभाव है - ऐसा जाने-माने तो अत्यन्ताभाव को माना, और (2) निज चैतन्य अरूपी आत्मा को भूलकर, औदारिक आदि शरीर,

मन, वाणी और लड्डु के अनन्त पुद्गलद्रव्यों में, मैंने लड्डु खाया – ऐसा जाने–माने तो अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्रश्न 8 – अन्योन्याभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु के स्कन्धों की वर्तमान पर्यायों का, एक दूसरे की परस्पर वर्तमान पर्यायों में आपस में जो अभाव है, वह अन्योन्याभाव है। जब एक जाति होते हुए, पुद्गल की वर्तमान पर्यायों में कोई सम्बन्ध नहीं है, तब मुझ निज आत्मा के साथ सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता – ऐसा जाने–माने तो अन्योन्याभाव को माना, और (2) औदारिक आदि शरीर, मन, वाणी और लड्डु आदि के परस्पर वर्तमान पर्यायों में जो अन्योन्याभाव है, उसे न मानकर, मैंने लड्डु खाया –ऐसी मान्यतावाले ने अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 9 – प्रागभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) लड्डु की वर्तमान पर्याय का, लड्डु की भूत काल की पर्याय से भी सम्बन्ध नहीं है तो मुझ आत्मा के साथ सम्बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी भी नहीं हो सकता है – ऐसा जाने–माने तो प्रागभाव को माना, और (2) लड्डु की वर्तमान पर्याय, भूत काल की पर्याय के बिना कैसे हो सकती है ? कभी नहीं हो सकती है, तब मैंने लड्डु खाया – ऐसी मान्यतावाले ने प्रागभाव को नहीं माना।

प्रश्न 10 – प्रध्वंसाभाव को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – (1) लड्डु की वर्तमान पर्याय का, लड्डु की भविष्य की पर्याय से सम्बन्ध नहीं है तो मुझ चेतन के साथ सम्बन्ध कैसे हो

सकता है? कभी भी नहीं हो सकता है – ऐसी मान्यतावाले ने प्रध्वंसाभाव को माना, और (2) लड्डु की वर्तमान पर्याय का, लड्डु की भविष्य की पर्याय से भी सम्बन्ध है, तभी तो मैंने लड्डु खाया — इस मान्यतावाले ने प्रध्वंसाभाव को नहीं माना।

प्रश्न 11 – मैंने लड्डु खाया – इस वाक्य में चारों अभावों के समझने से वीतरागता कैसी निकलती है? स्पष्टता से समझाइए।

उत्तर – (1) लड्डु का मुझ चेतन आत्मा से अत्यन्ताभाव है। (2) लड्डु स्कन्ध और औदारिक आदि शरीर, मन-वाणी में अन्योन्याभाव है। (3) लड्डु की वर्तमान पर्याय का, भूत की पर्याय में प्रागभाव है। (4) लड्डु की वर्तमान पर्याय का, भविष्य की पर्याय में प्रध्वंसाभाव है। जैसे, लड्डु का खाना, उस समय पर्याय की योग्यता से ही हुआ है; उसी प्रकार विश्व में जितने भी कार्य है, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे – ऐसा जानते-मानते ही पर में कर्ता -भोक्ता की बुद्धि का अभाव होकर, वीतरागता की प्राप्ति हो जाती है, फिर क्रम से मोक्षरूपी लक्ष्मी का नाथ बन जाता है।

प्रश्न 12 – मोक्षरूपी लक्ष्मी का नाथ किसके आश्रय से बनता है?

उत्तर – एकमात्र निज चेतन भगवान के आश्रय से ही मोक्षरूपी लक्ष्मी का नाथ बनता है।

जय महावीर – जय महावीर

(20)

संयुक्त प्रश्नोत्तर : विश्व; छह द्रव्य; छह सामान्यगुण; चार अभाव

प्रश्न 1 – द्रव्य-गुण-पर्याय, किस अपेक्षा समान हैं और किस अपेक्षा समान नहीं हैं ?

उत्तर – क्षेत्र से समान हैं और भाव से समान नहीं हैं।

प्रश्न 2 – द्रव्य-गुण-पर्याय में काल अपेक्षा समान कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – काल अपेक्षा द्रव्य-गुण समान हैं और पर्याय, एक समय की होने से समान नहीं है।

प्रश्न 3 – द्रव्य-गुण-पर्यायों में संख्या अपेक्षा समान कौन है ?

उत्तर – गुण और पर्याय, संख्या में समान हैं।

प्रश्न 4 – गुणों के समूह को द्रव्य कहते हैं, इसमें 'लक्षण' क्या और 'लक्ष्य' क्या है ?

उत्तर – 'गुणों का समूह', लक्षण है और 'द्रव्य', लक्ष्य है।

प्रश्न 5 – द्रव्य में निरन्तर पर्याय होने का क्या कारण है ?

उत्तर – 'द्रव्य' में पर्याय होने का कारण, द्रव्यत्वगुण है।

प्रश्न 6 – तुम आत्मा को कैसे जानते हो ?

उत्तर – प्रमेयत्वगुण के कारण जानता हूँ।

प्रश्न 7 – ज्ञान का लक्षण क्या है ?

उत्तर – स्व-पर प्रकाशक, ज्ञान का लक्षण है।

प्रश्न 8 – संख्या अपेक्षा कौन-कौन द्रव्य समान हैं ?

उत्तर – धर्म, अधर्म; आकाश, तीनों एक-एक हैं।

प्रश्न 9 – क्षेत्र अपेक्षा कौन-कौन द्रव्य समान हैं ?

उत्तर – धर्म, अधर्म, और जीव, क्षेत्र अपेक्षा असंख्यात प्रदेशी होने से समान हैं। (2) कालाणु और परमाणु, क्षेत्र अपेक्षा एक प्रदेशी होने से समान हैं।

प्रश्न 10 – निश्चय से अस्तिकाय कौन-कौन हैं ?

उत्तर – जीव, धर्म, अधर्म और आकाश, निश्चय से अस्तिकाय हैं।

प्रश्न 11 – व्यवहार से अस्तिकाय कौन हैं ?

उत्तर – पुद्गलस्कन्ध व्यवहार से अस्तिकाय हैं।

प्रश्न 12 – लोकाकाश, अलोकाकाश, ये आकाश के भेद निश्चय से हैं या व्यवहार से हैं ?

उत्तर – व्यवहार से हैं।

प्रश्न 13 – जो तुमने आज तक पाठ पढ़े, उनमें ऐसे गुणों का नाम बताओ, जो जीव-पुद्गलों में हों, बाकी द्रव्यों में नहीं हों ?

उत्तर – क्रियावतीशक्ति और वैभाविकशक्ति।

प्रश्न 14 – ज्ञानी को राग में कैसी बुद्धि होती है ?

उत्तर – हेयबुद्धि होती है।

प्रश्न 15 – अज्ञानी को शुभभावों में कैसी बुद्धि होती है ?

उत्तर – उपादेयबुद्धि होती है।

प्रश्न 16 - ज्ञानी, राग को क्या जानता है ?

उत्तर - ज्ञानी, राग को तपेदिक की बीमारी जानता है।

प्रश्न 17 - क्रियावतीशक्ति को जानने का क्या लाभ है ?

उत्तर - (1) घर में से रुपया, सोना-चाँदी डाकू ले गये, तो ज्ञानी जानता है कि वह अपनी क्रियावतीशक्ति के कारण गया; डाकुओं के कारण नहीं, (2) मुझ आत्मा का रुकना और गमन, शरीर के कारण या धर्म-अधर्मद्रव्य के कारण नहीं होता है; मात्र क्रियावतीशक्ति के कारण होता है - ऐसा जानने से आकुलता मिट जाती है।

प्रश्न 18 - क्या जीव, शरीर को आगे-पीछे करता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्रियावतीशक्ति के कारण होता है।

प्रश्न 19 - जीव क्यों नहीं बोलता है ?

उत्तर - जीव और शब्द में अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 20 - मुँह से तो शब्द निकालता है न ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि शब्द और मुँह में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 21 - क्या देव, अपने शरीर को छोटा बड़ा कर सकता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि देव की आत्मा और शरीर में अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 22 - जीव के दो भेद कौन-कौन से हैं ?

उत्तर - संसारी, और सिद्ध।

प्रश्न 23 - संसारी के दो भेद कौन-कौन से हैं ?

उत्तर - छद्मस्थ, और सर्वज्ञ।

प्रश्न 24 - छद्मस्थ के दो भेद कौन-कौन से हैं?

उत्तर - साधक, और बाधक।

प्रश्न 25 - बाधक के दो भेद कौन-कौन से हैं?

उत्तर - भव्य, और अभव्य।

प्रश्न 26 - भव्य के दो भेद कौन-कौन से हैं?

उत्तर - मोक्ष प्राप्त करनेवाला और मोक्ष प्राप्त न करनेवाला।

प्रश्न 27 - परमाणु की दो जातियों के क्या नाम हैं?

उत्तर - (1) कारणपरमाणु, (2) कार्यपरमाणु

प्रश्न 28 - कारणपरमाणु किसे कहते हैं?

उत्तर - स्कन्धों से जुड़ने की शक्तिवाले परमाणु को कारणपरमाणु कहते हैं।

प्रश्न 29 - कार्यपरमाणु किसे कहते हैं?

उत्तर - स्कन्धों में पृथक् होनेवाले परमाणु को कार्यपरमाणु कहते हैं।

प्रश्न 30 - शरीर और जीव में तथा शरीर और वस्त्र में कौन -सा अभाव है?

उत्तर - शरीर और जीव में अत्यन्ताभाव है तथा शरीर और वस्त्र में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 31 - जीव और चैतन्य में कौनसा अभाव है?

उत्तर - कोई भी अभाव नहीं है।

प्रश्न 32 - क्या पवन, ध्वजा को हिलाता है?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि पवन और ध्वजा में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 33 – ध्वजा किससे हिलती है ?

उत्तर – अपनी क्रियावतीशक्ति से हिलती है; पवन से नहीं।

प्रश्न 34 – सादि-अनन्त एक क्षेत्र में रहनेवाले कौन हैं ?

उत्तर – सिद्धभगवान हैं।

प्रश्न 35 – पर्याय की अपेक्षा से द्रव्य को क्या कहते हैं ?

उत्तर – पर्यायी या पर्यायवान कहते हैं।

प्रश्न 36 – चैतन्यगुण, सामान्य है या विशेष ?

उत्तर – छह द्रव्यों में से मात्र जीवद्रव्य में हैं, अन्य दूसरे द्रव्यों में नहीं, इस अपेक्षा विशेष है; और सब जीवद्रव्यों में है, इस अपेक्षा से सामान्य है।

प्रश्न 37 – ज्ञानगुण और सुखगुण की संख्या बताओ ?

उत्तर – जितने जीवद्रव्य है, उतने ही ज्ञानगुण और सुखगुण हैं।

प्रश्न 38 – अपने को कूटस्थ माननेवाला किस गुण का मर्म नहीं जानता है ?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण का मर्म नहीं जानता है।

प्रश्न 39 – अपने को पर और शरीरादि का करनेवाला माने तो क्या भूलता है ?

उत्तर – अगुरुलघुत्वगुण और अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 40 – ज्ञानावरणीयकर्म ने ज्ञान को दबाया – क्या यह ठीक है ?

उत्तर – गलत है क्योंकि दोनों में अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 41 – क्रियावतीशक्ति के गमन और स्थिति के निमित्त में क्या अन्तर है ?

उत्तर – गति में निमित्त, धर्मद्रव्य है और स्थिति में निमित्त, अधर्मद्रव्य है।

प्रश्न 42 – सिद्धभगवान को किसका निमित्त छूट गया और किसका सादि-अनन्त निमित्त हो गया ?

उत्तर – धर्मद्रव्य का निमित्त छूट गया और सादि-अनन्त अधर्म-द्रव्य का निमित्त हो गया।

प्रश्न 43 – आठ भेदवाला कौनसा शरीर है ?

उत्तर – कार्माणशरीर है।

प्रश्न 44 – पाँचों शरीर का कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – पाँचों शरीर का कर्ता, पुद्गलद्रव्य है; जीव नहीं है।

प्रश्न 45 – अविनाभावसम्बन्ध किसे कहते हैं, उनके कुछ उदाहरण दो ?

उत्तर – (1) एक पदार्थ के साथ, दूसरे का होना, अविनाभाव-सम्बन्ध है। जैसे :— (1) जहाँ कार्माणशरीर होता है, वहाँ तैजस-शरीर होता ही है। (2) जहाँ मतिज्ञान होता है, वहाँ श्रुतज्ञान होता ही है। (3) जहाँ रङ्ग होता है, वहाँ स्पर्श-रस-गन्ध होता ही है। (4) जहाँ-जहाँ ज्ञान होता है, वहाँ-वहाँ सुख होता ही है।

प्रश्न 46 – तुम किस अपेक्षा से एक हो ?

उत्तर – मैं अपने जीवद्रव्य की अपेक्षा से एक हूँ।

प्रश्न 47 – तुम किस अपेक्षा से असंख्य हो ?

उत्तर – मैं अपने प्रदेशों की अपेक्षा से असंख्य हूँ।

प्रश्न 48 – तुम किस अपेक्षा अनन्त हो ?

उत्तर – मैं अपने गुणों की अपेक्षा से अनन्त हूँ।

प्रश्न 49 – सम्यग्दर्शन और चक्षुदर्शन में क्या भेद है?

उत्तर – दोनों पृथक्-पृथक् गुण की पर्यायें हैं; इसलिए गुणभेद है।

प्रश्न 50 – सम्यग्दर्शन और चक्षुदर्शन दोनों किसे होते हैं?

उत्तर – साधक जीव को होते हैं।

प्रश्न 51 – चक्षुदर्शन हो और सम्यग्दर्शन न हो – क्या ऐसा होता है?

उत्तर – मिथ्यादृष्टि की चक्षुदर्शन होता है, सम्यग्दर्शन नहीं होता है। चक्षुदर्शन, तीन इन्द्रियवाले जीवों को भी नहीं होता है।

प्रश्न 52 – सम्यग्दर्शन हो और चक्षुदर्शन न हो – क्या ऐसा हो सकता है?

उत्तर – हाँ, हो सकता है; देव (अहरन्त-सिद्ध) को सम्यग्दर्शन होता है और चक्षुदर्शन नहीं होता, क्योंकि उनको केवलदर्शन होता है।

प्रश्न 53 – ज्ञान और मतिज्ञान में क्या अन्तर है?

उत्तर – ज्ञान, गुण है और मतिज्ञान, ज्ञानगुण की पर्याय है।

प्रश्न 54 – क्या तुम यहाँ रेल से आये हो?

उत्तर – मैं अपनी क्रियावतीशक्ति से आया हूँ; रेल, शरीर और धर्मद्रव्य के कारण नहीं आया हूँ।

प्रश्न 55 – स्कन्ध होने का सच्चा कारण क्या है?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता। परमाणु की स्निग्ध -रूक्ष अवस्था, स्कन्ध बनने में कारण (निमित्त) है।

प्रश्न 56 – मैंने कुएँ से पानी खींचा – क्या यह सत्य है?

उत्तर – बिल्कुल गलत है, पानी अपनी क्रियावतीशक्ति से ऊपर आया है।

प्रश्न 57 – आहारवर्गणा, तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा और कार्माणवर्गणा के क्रम का क्या कारण है?

उत्तर - (1) जीव को प्रथम अपने संयोगरूप शरीर का ज्ञान होता है; अत: प्रथम आहारवर्गणा रखी है। (2) पश्चात् शरीर के तेज का पता चलता है; अत: दूसरे नम्बर पर तैजसवर्गणा रखी है। (3) फिर दो, तीन इन्द्रियों के भाषा प्रगट होती है; अत: तीसरे नम्बर पर भाषावर्गणा रखी है। (4) मन मात्र संज्ञी जीवों के ही होता है; अत: चौथे नम्बर पर मनोवर्गणा रखी है। (5) कार्माणशरीर को सूक्ष्मपने के कारण, पाँचवें नम्बर पर कार्माणवर्गणा को रखा है।

प्रश्न 58 - धारणा के प्रध्वन्साभाव में क्या आवेगा?

उत्तर - श्रुतज्ञान आवेगा।

प्रश्न 59 - जीव और पुद्गल में परस्पर मिलान करो?

उत्तर - (1) संख्या में जीव, अनन्त और पुद्गल, जीव से अनन्त गुणा अधिक हैं। (2) क्षेत्र में जीव, असंख्यातप्रदेशी और पुद्गल, एकप्रदेशी है। (3) जीव, अमूर्त है और पुद्गल, मूर्त है। (4) जीव, चेतन है और पुद्गल, जड़ है। (5) जीव की क्रियावतीशक्ति तथा वैभाविकशक्ति, चेतन है और पुद्गल की क्रियावतीशक्ति तथा वैभाविकशक्ति, अचेतन है।

प्रश्न 60 - ध्रौव्य रहता हुआ, निरन्तर बदलता है -कौन-सा गुण ख्याल में आता है?

उत्तर - अस्तित्व, द्रव्यत्वगुण ख्याल में आता है।

प्रश्न 61 - सीमन्धरभगवान की मुद्रा अति भव्य है - कौन से गुण का पता चलता है?

उत्तर - प्रदेशत्वगुण का पता चलता है।

प्रश्न 62 - सिद्धभगवान को कितने अभाव लग सकते हैं?

उत्तर - अन्योन्याभाव को छोड़कर तीनों लग सकते हैं।

प्रश्न 63 – कर्मोदय के कारण राग हुआ, तो कौन से अभाव को भूलता है?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 64 – द्रव्यलिङ्ग में भावलिङ्ग प्रगट होता है तो किस अभाव को भूलता है?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 65 – मुनिराज वाह्य पाँच समिति, तीन गुप्ति को पालते हैं, तो किस अभाव को भूलता है?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 66 – दो द्रव्यों का कर्ता एक है तो किस अभाव को भूलता है?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 67 – क्रमबद्धपर्याय को न माननेवाला, किस अभाव को भूलता है?

उत्तर – प्रागभाव और प्रध्वन्साभाव को भूलता है।

प्रश्न 68 – पहले था, अब नहीं है, इससे कौनसा अभाव ज्ञान में आता है?

उत्तर – प्रागभाव, ज्ञान से आता है।

प्रश्न 69 – घातिकर्म और अघातिकर्म में कौनसा अभाव है?

उत्तर – अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 70 – दण्ड, चक्र से घड़ा बना – तो कौन से अभाव को भूला है?

उत्तर – अन्योन्याभाव को भूला है।

प्रश्न 71 – भगवान के जिनबिम्ब के दर्शन करने से सम्यग्दर्शनादि प्रगट होते हैं – क्या यह बात ठीक है ?

उत्तर – यह व्यवहारकथन है; व्यवहारकथन को सच्चा माननेवाले ने अगुरुलघुत्वगुण और अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्रश्न 72 – द्रव्यत्वगुण के कारण, ज्ञान में क्या होता है ?

उत्तर – ज्ञानगुण में निरन्तर समय-समय पर नया-नया परिणमन होता है; उसमें द्रव्यत्वगुण निमित्त है।

प्रश्न 73 – अगुरुलघुत्वगुण के कारण, ज्ञान में क्या होता है ?

उत्तर – ज्ञानगुण, वर्णादि पुद्गलों के गुणों में नहीं जाता और ज्ञान-गुण, श्रद्धा, चारित्र आदि दूसरे गुणोंरूप नहीं होता है।

प्रश्न 74 – अनन्त गुणों का द्रव्य के साथ कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – नित्यतादात्म्यसम्बन्ध है।

प्रश्न 75 – शुभाशुभविकारीभावों का और गुणभेद का, आत्मा के साथ कैसा सम्बन्ध है ?

उत्तर – अनित्यतादात्म्यसम्बन्ध है।

प्रश्न 76 – जाति अपेक्षा छह द्रव्य किस-किस अपेक्षा समान नहीं हैं ?

उत्तर – (1) विशेषगुणों की अपेक्षा; (2) क्षेत्र की अपेक्षा; (3) संख्या की अपेक्षा, समान नहीं हैं।

प्रश्न 77 – विश्व के किन द्रव्यों में संकोच-विस्तार होता है ?

उत्तर – मात्र जीवद्रव्य में ही संकोच-विस्तार होता है।

प्रश्न 78 – मैं पलंग पर सो गया — मुझमें और सोने में कौन-सा अभाव है तथा पलंग और सोने में कौन-सा अभाव है ?

उत्तर – मुझमें, सोने में अत्यन्ताभाव है, और पलंग और सोने में अन्योन्याभाव है।

प्रश्न 79 – अनादि–अनन्त स्थिर एक क्षेत्र में रहनेवाले कौन –कौन से द्रव्य हैं ?

उत्तर – धर्म, अधर्म, आकाश, और कालद्रव्य हैं।

प्रश्न 80 – छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं – इन सबका एक क्षेत्र में रहते हुए कौन–सा अभाव है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 81 – चक्षुदर्शन का द्रव्य–गुण–पर्याय क्या है ?

उत्तर – चक्षुदर्शन स्वयं अर्थपर्याय है; आत्मा, द्रव्य है और दर्शन, गुण है।

प्रश्न 82 – क्या एक द्रव्य के अस्तित्वगुण और वस्तुत्वगुण का द्रव्य–क्षेत्र–काल–भाव एक ही है ?

उत्तर – द्रव्य–क्षेत्र–काल एक ही है परन्तु दोनों के भाव में अन्तर है।

प्रश्न 83 – कूड़े को बाहर फैंक दिया – वह निकम्मा है, किस गुण को नहीं माना ?

उत्तर – वस्तुत्वगुण के कारण, कूड़ा भी अपनी प्रयोजनभूत क्रिया कर ही रहा है; निकम्मा नहीं है।

प्रश्न 84 – मैं चुपचाप ऐसा कार्य करूँ, किसी को पता न चले – ऐसी मान्यतावाले ने कौन से सामान्यगुण को नहीं माना ?

उत्तर – प्रमेत्यत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 85 – अगुरुलघुत्वगुण के कारण, एक गुण, दूसरे गुणरूप नहीं होता हैं – यह एक द्रव्य के गुणों की बात है या पृथक्–पृथक् द्रव्यों के गुणों की बात है ?

उत्तर – एक ही द्रव्य के गुणों की बात है।

प्रश्न 86 – मोक्ष होने पर ' तेज में तेज मिल जाता है' इस प्रकार सब जीव एक हो जाते हैं – ऐसी मान्यतावाले ने कौन से सामान्यगुण और किस अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – सामान्यगुणों में अगुरुलघुत्वगुण को और अभावों में से अत्यन्ताभाव को नहीं माना।

प्रश्न 87- ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध किस सामान्यगुण को बताता है ?

उत्तर – प्रमेयत्वगुण को बताता है।

प्रश्न 88 – कौनसा द्रव्य अक्रिय है ?

उत्तर – कोई भी द्रव्य, अक्रिय नहीं है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में वस्तुत्वगुण के कारण अर्थक्रियाकारित्व होता ही रहता है।

प्रश्न 89 – क्या एक रुपये का एक ही आकार है ?

उत्तर – एक आकार नहीं है; एक रुपए में जितने परमाणु हैं, उतने ही आकार एक रुपए में हैं।

प्रश्न 90 – गेहूँ का आटा, चक्की से हुआ है या बाई से ?

उत्तर – दोनों में से किसी से भी नहीं हुआ, क्योंकि बाई और आटा का अत्यन्ताभाव है तथा गेहूँ और चक्की में अन्योन्याभाव है। द्रव्यत्वगुण के कारण, पर्याय बदल गयी।

प्रश्न 91 – कालद्रव्य की क्या पहिचान है ?

उत्तर – परिणमनहेतुत्व इत्यादि।

प्रश्न 92 – आम, हरा था, पीला हो गया, तो द्रव्य-गुण-पर्याय में से क्या बदला ?

उत्तर – मात्र वर्णगुण की पर्याय बदली।

प्रश्न 93 – विश्व में किस-किस द्रव्य के टुकड़े हो सकते हैं ?

उत्तर – विश्व में किसी भी द्रव्य के टुकड़े नहीं हो सकते हैं।

प्रश्न 94 – एक क्षेत्र में एक जाति के दो द्रव्य कभी न आवें, – ऐसे द्रव्य का क्या नाम है ?

उत्तर – कालद्रव्य है।

प्रश्न 95 – अपना ही विशेषगुण अपने को निमित्त न बने, – ऐसे द्रव्य कौन-कौन से हैं ?

उत्तर – धर्म और अधर्मद्रव्य हैं।

प्रश्न 96 – घड़ी की सुई कौन घूमाता है ?

उत्तर – अपनी क्रियावतीशक्ति के कारण घूमती है।

प्रश्न 97 – घड़ी की सुई निश्चयकाल है या व्यवहारकाल है ?

उत्तर – दोनों नहीं है, क्योंकि घड़ी की सुई तो पुद्गलों का पिण्ड है।

प्रश्न 98 – दुःखी करने का भाव और सुखी करने का भाव, क्या है और क्या नहीं है ?

उत्तर – दु:खी-सुखी करने का भाव, चारित्रगुण की विभावअर्थ-पर्याय है; स्वभावअर्थपर्याय नहीं है।

प्रश्न 99 – प्रकाश हुआ – इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ ?

उत्तर – अन्धकार का अभाव, प्रकाश का उत्पाद और वर्णगुण, कायम।

प्रश्न 100 – भगवान् ने सिद्धपद पाया – इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ ?

उत्तर - चौदहवें गुणस्थान का व्यय, सिद्धपद का उत्पाद और आत्मा, कायम।

प्रश्न 101 - घी पिघला-इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ ?

उत्तर - जमी अवस्था का व्यय, पिघले घी का उत्पाद और घी, कायम।

प्रश्न 102 - ठण्डा पानी — इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ ?

उत्तर - उष्णता का व्यय, ठण्डा का उत्पाद और स्पर्शगुण, कायम।

प्रश्न 103 - सर्दी पड़ी, इसमें उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य लगाओ ?

उत्तर - गर्मी का व्यय, सर्दी का उत्पाद और आहारवर्गणारूप स्पर्शगुण, कायम।

प्रश्न 104 - औपशमिकसम्यक्त्व प्रगटा-इसमें उत्पाद -व्यय-ध्रौव्य लगाओ ?

उत्तर - मिथ्यात्वदशा का व्यय, औपशमिकसम्यक्त्व का उत्पाद और आत्मा का श्रद्धागुण, ध्रौव्य।

प्रश्न 105 - मिथ्यादर्शन क्या है ?

उत्तर - मिथ्यादर्शन, जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की विभावअर्थ-पर्याय है।

प्रश्न 106 - पुरुषाकार क्या है ?

उत्तर - शरीरसहित अवस्था में जीवद्रव्य के प्रदेशत्वगुण की विभावअर्थपर्याय है तथा सिद्धदशा में जीवद्रव्य के प्रदेशत्वगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 107 - मेघ गर्जना क्या है ?

उत्तर – भाषावर्गणा का परिणमन है।

प्रश्न 108 – परिणमनहेतुत्व क्या है?

उत्तर – कालद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 109 – अवगाहनहेतुत्व क्या है?

उत्तर – आकाशद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 110 – केवलज्ञान क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के ज्ञानगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 111 – रुपया क्या है?

उत्तर – स्कन्ध के प्रदेशत्वगुण की विभावव्यंजनपर्याय हैं।

प्रश्न 112 – शुभभाव क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 113 – गन्ध क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 114 – श्रद्धा क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य का विशेषगुण हैं।

प्रश्न 115 – सामान्यगुण पहले या विशेषगुण पहले?

उत्तर – दोनों साथ-साथ हैं; आगे-पीछे नहीं है, अर्थात् अनादि-अनन्त हैं।

प्रश्न 116 – क्या अस्तित्वगुण जाननेयोग्य हैं?

उत्तर – हाँ, प्रमेयत्वगुण के कारण, अस्तित्वगुण जाननेयोग्य है।

प्रश्न 117 – प्रयोजनभूत कार्य किसमें होता है, किसमें नहीं होता है?

उत्तर - प्रयोजनभूत कार्य, पर्याय में ही होता है; द्रव्य-गुण में नहीं होता है।

प्रश्न 118 - अगुरुलघुत्वगुण क्या बताता है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य, जैसा का तैसा रहे; छोटा-बड़ा न होवे — यह अगुरुलघुत्वगुण बताता है।

प्रश्न 119 - विश्व के तीन भेद कौन-कौन से हो सकते हैं ?

उत्तर - (1) द्रव्य-गुण-पर्याय; (2) उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य।

प्रश्न 120 - गतिहेतुत्व और स्थितिहेतुत्व में कौनसा अभाव है ?

उत्तर - अत्यन्ताभाव है।

प्रश्न 121 - सूत में प्रागभाव और प्रध्वन्साभाव बताओ ?

उत्तर - सूत का, पूणी में अभाव, प्रागभाव है और सूत का, कपड़े में अभाव, प्रध्वन्साभाव है।

प्रश्न 122 - एक सिद्ध को दूसरे सिद्ध की अपेक्षा है - कोई ऐसा माने तो उसने कौन से सामान्यगुण को नहीं माना ?

उत्तर - अगुरुलघुत्वगुण को नहीं माना।

प्रश्न 123 - मैं अपने में बसता हूँ - कौन से सामान्यगुण को माना ?

उत्तर - वस्तुत्वगुण को माना।

प्रश्न 124 - सम्यग्दर्शन होते ही तुरन्त वीतरागता होनी चाहिए — ऐसी मान्यतावाला किस सामान्यगुण का मर्म नहीं जानता ?

उत्तर - अगुरुलघुत्वगुण का मर्म नहीं जानता है।

प्रश्न 125 – प्रागभाव और प्रध्वंसाभाव को न माने तो कौनसा सामान्यगुण उड़ जाता हैं ?

उत्तर – द्रव्यत्वगुण उड़ जाता है।

प्रश्न 126 – अत्यन्ताभाव को न माने तो कौनसा सामान्यगुण उड़ जाता हैं ?

उत्तर – अगुरुलघुत्वगुण उड़ जाता है।

प्रश्न 127 – चारों अभाव, रूपी हैं या अरूपी हैं ?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य के रूपी हैं और बाकी पाँच द्रव्यों के अरूपी हैं।

प्रश्न 128 – जीव क्या है और जीव का लक्षण क्या है ?

उत्तर – जीव, द्रव्य है और चैतन्य, जीव का लक्षण है।

प्रश्न 129 – शरीर क्या है और शरीर किसकी पर्याय है ?

उत्तर – शरीर, पर्याय है और अनन्त पुद्गलों की विभावव्यंजन-पर्याय तथा विभावअर्थपर्यायोंरूप स्कन्ध है।

प्रश्न 130 – बुखार किस द्रव्य-गुण की अवस्था है ?

उत्तर – बुखार, पुद्गलद्रव्य के स्पर्शगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 131 – सिद्धदशा क्या है ?

उत्तर – सिद्धदशा, आत्मा के सम्पूर्ण गुणों की स्वभावअर्थ-पर्याय और प्रदेशत्वगुण की स्वभावव्यंजनपर्याय है।

प्रश्न 132 – दया क्या है ?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 133 – धर्म क्या है ?

उत्तर – (1) धर्म नाम का एक द्रव्य है। (2) सम्यग्दर्शनादि

शुद्धभावों को भी धर्म कहते हैं। (3) वस्तु के स्वभाव को भी धर्म कहते हैं।

प्रश्न 134 – स्पर्श क्या है?

उत्तर – पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 135 – स्थितिहेतुत्व और गतिहेतुत्व क्या है?

उत्तर – स्थितिहेतुत्व, अधर्मद्रव्य का और गतिहेतुत्व, धर्मद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 136 – पुण्य-पाप का भाव क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 137 – लौकिक सुख-दुःख क्या है?

उत्तर – लौकिक सुख-दुःख जीवद्रव्य के सुखगुण की विभाव-अर्थपर्याय है।

प्रश्न 138 – क्रियावतीशक्ति क्या है?

उत्तर – जीव और पुद्गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 139 – उपवास क्या है?

उत्तर – (1) उपवास का भाव, जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है। (2) उप=समीप, वास=रहना, अर्थात् आत्मा के समीप में रहना, वह सच्चा उपवास है, यह जीवद्रव्य के चारित्रगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 140 – भक्ति-पूजा का भाव क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 141 – नाचना क्या है?

उत्तर – असमानजातीयद्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 142 – पूजा की सामग्री क्या है?

उत्तर – आहारवर्गणा की स्कन्धरूप पर्यायें हैं।

प्रश्न 143 – दान क्या है?

उत्तर – (1) रुपया-पैसा आदि देना, पुद्गलद्रव्य की विभाव-अर्थपर्यायें और विभावव्यंजनपर्यायें हैं और पैसों का क्षेत्र से क्षेत्रान्तर होना, पुद्गलों की क्रियावतीशक्ति की अर्थपर्याय है। (2) दान का भाव, चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है। (3) सच्चा दान, वीर्यगुण की स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 144 – कर्म शब्द किस-किस अर्थ में प्रयुक्त होता है?

उत्तर – कर्म शब्द पाँच अर्थों में प्रयुक्त होता है। (1) द्रव्यकर्म (2) नो कर्म (3) भावकर्म (4) कर्मकारक (5) कर्म, अर्थात् कार्य।

प्रश्न 145 – भावकर्म क्या है?

उत्तर – जीवद्रव्य के चारित्रगुण की विभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 146 – ज्ञान का अर्थ क्या है?

उत्तर – (1) ज्ञान, अर्थात् आत्मा (2) ज्ञान, अर्थात् आत्मा का ज्ञानगुण (3) ज्ञानी के ज्ञान को सम्यग्ज्ञान कहते हैं और अज्ञानी के ज्ञान को मिथ्याज्ञान कहते हैं।

प्रश्न 147 – केवलदर्शन क्या है?

उत्तर – केवलदर्शन, जीवद्रव्य के दर्शनगुण की स्वभावअर्थ-पर्याय है।

प्रश्न 148 – मोक्ष किसे कहते हैं?

उत्तर – आत्मा की सम्पूर्ण शुद्धि को मोक्ष कहते हैं।

प्रश्न 149 – संसार क्या है?

उत्तर – परद्रव्यों में अपनेपने का भाव, यह 'मैं' इसका नाम संसार है।

प्रश्न 150 - चारित्र क्या है ?

उत्तर - (1) जीवद्रव्य का विशेषगुण है, (2) मोह-क्षोभरहित आत्मा परिणाम, चारित्र है।

प्रश्न 151 - श्रावकपना क्या है ?

उत्तर - श्रावकपना, जीवद्रव्य के चारित्रगुण की एकदेश स्वभाव-अर्थपर्याय है।

प्रश्न 152 - मुनिपना क्या है ?

उत्तर - मुनिपना, जीवद्रव्य के चारित्रगुण की सकलचारित्र स्वभावअर्थपर्याय है।

प्रश्न 153 - दौड़ना-बैठना क्या है ?

उत्तर - दौड़ना-बैठना, पुद्‌गलद्रव्य की क्रियावतीशक्तिगुण की विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 154 - सम्यक्त्व-मिथ्यात्व क्या है ?

उत्तर - (1) सम्यक्त्व, जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की स्वभावअर्थ-पर्याय है। (2) मिथ्यात्व, जीवद्रव्य के श्रद्धागुण की विभावअर्थ-पर्याय है।

प्रश्न 155 - रस क्या है ?

उत्तर - पुद्‌गलद्रव्य का विशेषगुण है।

प्रश्न 156 - खट्‌टा-मीठा क्या है ?

उत्तर - पुद्‌गलद्रव्य के रसगुण की विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 157 - जैन किसे कहते हैं ?

उत्तर - निज शुद्धात्मद्रव्य के आश्रय से मोह-राग-द्वेष को जीतनेवाली निर्मलपरिणति जिसने प्रगट की है, उसे जैन कहते हैं।

प्रश्न 158 – सच्चे जैन कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर – तीन प्रकार के हैं। (1) उत्तम जैन – अरहन्त सिद्ध; (2) मध्यम जैन – सातवें गुणस्थान से लेकर, बारहवें गुणस्थान तक के जीव; (3) जघन्य जैन – चौथा, पाँचवा, छठा गुणस्थानवाले जीव।

प्रश्न 159 – कषाय किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिस भाव से संसार का लाभ हो, उसे कषाय कहते हैं।

प्रश्न 160 – आहारकशरीर किसका कार्य है ?

उत्तर – आहारवर्गणा का कार्य है।

प्रश्न 161 – मेज-कुर्सी-घड़ी क्या है ?

उत्तर – समानजातीयद्रव्यपर्याय है।

प्रश्न 162 – सुगन्ध-दुर्गन्ध क्या है ?

उत्तर – पुद्‌गलद्रव्य के गन्धगुण की विभावअर्थपर्यायें हैं।

प्रश्न 163 – भगवान की वाणी सुनकर सम्यग्ज्ञान हुआ – ऐसी मान्यतावाला कौन से अभाव को भूलता है ?

उत्तर – अत्यन्ताभाव को भूलता है।

प्रश्न 164 – सातावेदनीय के उदय से पैसा आता है – ऐसी मान्यतावाला कौन से अभाव को भूलता है ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को भूलता है।

प्रश्न 165 – मिथ्यात्व से सम्यक्त्व होनेवाली मान्यतावाले ने किस अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – प्रागभाव को नहीं माना।

प्रश्न 166 – सन्दूक, आत्मा ने तो नहीं उठाया, परन्तु हाथों ने तो उठाया –किस अभाव को भूलता है ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को भूलता है।

प्रश्न 167 – मैं रोटी खाता हूँ-कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अन्यन्ताभाव को नहीं माना है।

प्रश्न 168 –शरीर तो रोटी खाता है–कौन से अभाव को नहीं माना ?

उत्तर – अन्योन्याभाव को नहीं माना।

प्रश्न 169 –एक जीव की सत्ता कितनी है ?

उत्तर – अस्तित्वादि अनन्त सामान्यगुण; ज्ञान–दर्शनादि अनन्त विशेषगुण; एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायें, यह एक जीव की सत्ता है। इसी प्रकार प्रत्येक जीव की सत्ता है–ऐसा जानना।

प्रश्न 170 –प्रत्येक पुद्गल की सत्ता कितनी है ?

उत्तर – अस्तित्वादि अनन्त सामान्यगुण; स्पर्श–रस–गन्ध–वर्णादि अनन्त विशेषगुण; एक व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायें एक परमाणु की सत्ता है; उसी प्रकार प्रत्येक परमाणु की सत्ता इतनी है।

प्रश्न 171 – धर्मास्तिकाय की सत्ता कितनी है ?

उत्तर – अस्तित्वादि अनन्त सामान्यगुण; गति हेतुत्वादि अनन्त विशेषगुण; एक स्वभावव्यंजनपर्याय और अनन्त स्वभावअर्थपर्यायें, यह धर्मास्तिकाय की सत्ता है।

प्रश्न 172 – अधर्मास्तिकाय की सत्ता कितनी है ?

उत्तर – अस्तित्वादि अनन्त सामान्यगुण; स्थितिहेतुत्वादि अनन्त विशेषगुण; एक स्वभावव्यंजनपर्याय और अनन्त स्वभावअर्थपर्यायें, यह अधर्मास्तिकाय की सत्ता है।

प्रश्न 173 – आकाशद्रव्य की सत्ता कितनी है ?

उत्तर – अस्तित्वादि अनन्त सामान्यगुण; अवगाहनहेतुत्वादि अनन्त विशेषगुण; एक स्वभावव्यंजनपर्याय और अनन्त स्वभाव-अर्थपर्यायें, यह आकाशद्रव्य की सत्ता है।

प्रश्न 174 –कालद्रव्य की सत्ता कितनी है ?

उत्तर – अस्तित्वादि अनन्त सामान्यगुण; परिणमनहेतुत्वादि अनन्त विशेषगुण; एक स्वभावव्यंजनपर्याय और अनन्त स्वभावअर्थ-पर्यायें, यह एक कालद्रव्य की सत्ता है।

प्रश्न 175 –(1) द्रव्य का नाम, (2) द्रव्य का लक्षण, (3) द्रव्य की संख्या, (4) द्रव्य की प्रदेश संख्या (5) द्रव्य, काय अपेक्षा, (6) द्रव्य में भेद, (7) द्रव्य के सामान्यगुण (8) द्रव्य के विशेषगुण, (9) द्रव्य की पर्याय। इन नौ के आधार से जीव-पुद्गल -धर्म-अधर्म-आकाश और काल को समझाइये ?

उत्तर – जीवद्रव्य (1) जीव, (2) ज्ञान-दर्शन उपयोगमयी, (3) अनन्त, (4) असंख्यात प्रदेशी, (5) अस्तिकाय, (6) संसारी -मुक्त, (7) अस्तित्वादि सामान्यगुण, (8) ज्ञान-दर्शन-चारित्र -क्रियावतीशक्ति-वैभाविकशक्ति आदि विशेषगुण, (9) एक-व्यंजनपर्याय और अनन्त अर्थपर्यायसहित है।

पुद्गलद्रव्य – (1) पुद्गल, (2) स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण, (3) अनन्तानन्त, (4) एक प्रदेशी, (5) अस्ति है; काय नहीं है। व्यवहार से स्कन्ध की अपेक्षा अस्तिकाय, (6) परमाणु-स्कन्ध, (7) अस्तित्वादि सामान्यगुण (8) स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-क्रियावतीशक्ति, वैभाविकशक्ति आदि विशेषगुण, (9) एकव्यंजन पर्याय और अनन्तअर्थपर्यायें हैं।

धर्मद्रव्य — (1) धर्म, (2) गतिहेत्वादि, (3) एक, (4) असंख्यात प्रदेशी, (5) अस्तिकाय, (6) जीव और पुद्गल के गमन में निमित्त, (7) अस्तित्वादि सामान्यगुणः (8) गतिहेतुत्वादि विशेषगुण, (9) एक स्वभावव्यंजनपर्याय और अनन्त स्वभाव-अर्थपर्यायें हैं।

अधर्मद्रव्य — (1) अधर्म, (2) स्थितिहेतुत्वादि, (3) एक, (4) असंख्यात प्रदेशी, (5) अस्तिकाय, (6) जीव और पुद्गल को स्थिर होने में निमित्त, (7) अस्तित्वादि सामान्यगुण, (8) स्थिति-हेतुत्वादि विशेषगुण, (9) एक स्वभावव्यंजनपर्याय और अनन्त स्वभावअर्थपर्यायें हैं।

कालद्रव्य — (1) काल, (2) परिणमनहेतुत्वादि, (3) लोक -प्रमाण असंख्यात, (4) एक प्रदेशी, (5) अस्ति है; काय नहीं है, (6) लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर स्थित है और प्रत्येक द्रव्य के परिणमन में निमित्त, (7) अस्तित्वादि सामान्यगुण, (8) परिणमन -हेतुत्वादि विशेषगुण, (9) एक स्वभावव्यंजनपर्याय और अनन्त स्वभावअर्थपर्यायें हैं।

सम्यग्दर्शन से कर्म का क्षय

जो जीव, मिथ्यात्व को छोड़कर सम्यक्त्व को ध्याता है, वही सम्यग्दृष्टि होता है, और सम्यक्त्वरूप परिणमन से वह जीव इन दुष्ट अष्टकर्मों का क्षय करता है। *[श्री मोक्षपाहुड़ - 87]*

●●

21

आत्महित के आठ सूत्र

प्रश्न 1 – जिस जीव को अपना कल्याण करना हो, उसे क्या-क्या जानना जरूरी है ?

उत्तर – जिस जीव को मिथ्यात्व का अभाव करके, सम्यग्दर्शन प्राप्त करना हो और मोक्ष प्राप्त करना हो, उसे सच्चे कारण–कार्य का ज्ञान करने के लिए आठ बातों का निर्णय करना चाहिए।

प्रश्न 2 – जिससे सम्यग्दर्शन होकर मोक्ष की प्राप्ति हो, ऐसे सच्चे कारण-कार्य का ज्ञान करने के लिए आठ बातें कौन -कौन सी हैं ?

उत्तर – (1) बन्ध किसे कहते हैं ? (2) जीव और पुद्गल के निश्चय और व्यवहार के बन्ध का ज्ञान; (3) इन्द्रियज्ञान की मर्यादा क्या है ? (4) विकारी और अविकारीपर्यायों की स्वतन्त्रता का ज्ञान; (5) विकारीपर्याय को पराश्रित क्यों कहा ? (6) जब विकारी पर्याय स्वतन्त्र है, तो शास्त्रों में स्व–पर प्रत्ययों को क्यों कहा जाता हैं ? (7) प्रत्येक स्कन्ध में प्रत्येक परमाणु अपना–अपना स्वतन्त्र कार्य करता है, उसकी स्वतन्त्रता का ज्ञान; (8) अर्थपर्याय और व्यंजनपर्याय के विषयों में मिथ्यामान्यता क्या–क्या हैं। इस प्रकार सच्चे कारण–कार्यादिक का ज्ञान होने से मिथ्यात्व का अभाव और सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर, साथ ही केवलज्ञान में जैसा वस्तु का स्वभाव है, वैसा ही दृष्टि में आ जाता है।

प्रश्न 3 – (1) बन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर – जिस सम्बन्धविशेष से अनेक वस्तुओं में एकपने का ज्ञान होता है, उस सम्बन्धविशेष को बन्ध कहते हैं।

प्रश्न 4 – बन्ध की परिभाषा को स्पष्ट समझाईये ?

उत्तर – (1) सम्बन्धविशेष होना चाहिए; (2) अनेक वस्तुएँ होनी चाहिए; (3) अनेक वस्तुओं में एकपने का कथन होना चाहिए; (4) ज्ञान में प्रत्येक वस्तु की स्वतन्त्रता आनी चाहिए। जैसे– हलुवा कहा तो। (1) हलुवा, सम्बन्धविशेष है। (2) हलुवे में अनेक परमाणु हैं, यह अनेक वस्तुएँ हुईं। (3) कथन में आया कि यह हलुवा है। (4) हलुवे में जितने परमाणु हैं, वे अलग-अलग हैं; एक का दूसरे से सम्बन्ध नहीं है। इससे प्रत्येक वस्तु की स्वतन्त्रता ज्ञान में आनी चाहिए, तभी बन्ध का सच्चा ज्ञान कहा जा सकता है।

प्रश्न 5 – दूध और कंकड़, सम्बन्धविशेष हैं या नहीं ?

उत्तर – (1) दूध और कंकड़ को सम्बन्धविशेष नहीं कह सकते, क्योंकि दोनों अलग-अलग ज्ञान में आते हैं। (2) दूध और पानी को सम्बन्धविशेष कहेंगे, क्योंकि दूध और पानी, अनेक चीजों में एकपने का ज्ञान कराता है; इसलिए इसे सम्बन्धविशेष कहेंगे।

प्रश्न 6 – दूध और पानी के मेल को सम्बन्धविशेष कब कहा जा सकेगा ?

उत्तर – दूध और पानी में प्रत्येक परमाणु अपने-अपने गुण -पर्यायसहित वर्त रहे हैं; एक का दूसरे में अभाव है तथा एक परमाणु की वर्तमान पर्याय का दूसरे परमाणुओं की वर्तमान पर्यायों में अन्योन्याभाव है – ऐसा जिसको ज्ञान वर्तता हो, वही दूध और पानी के मेल को सम्बन्धविशेष कह सकता है; दूसरा नहीं।

प्रश्न 7 – छह द्रव्यों के समूह को विश्व कहते हैं – यह सम्बन्धविशेष है या नहीं?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि छह द्रव्यों के समूह में सम्बन्धविशेष नहीं है, क्योंकि अनेक चीजें तो है परन्तु एकपने का ज्ञान नहीं होता है; इसलिए छह द्रव्यों के समूहरूप विश्व में सम्बन्धविशेष नहीं है।

प्रश्न 8 – सम्बन्धविशेष जिन्हें कहा जा सकता है, उनके कुछ नाम गिनाओ?

उत्तर – रोटी, मेज, दरी, फोटो, डिब्बा, लालटेन, किताब, घड़ी आदि अनेक चीजें हैं परन्तु कहने में एक आती है और ज्ञानी जानते हैं कि प्रत्येक रोटी आदि में परमाणुओं का स्वरूप अलग-अलग है; इसलिए यह सम्बन्धविशेष के नाम से कहे जाते हैं।

प्रश्न 9 – बन्ध का सच्चा ज्ञान किसे होता और किसे नहीं होता है?

उत्तर – एकमात्र ज्ञानियों को होता है; द्रव्यलिङ्गी मुनि आदि अज्ञानियों को नहीं होता है।

प्रश्न 10 – जिससे सम्यग्दर्शन हो फिर क्रम से मोक्ष हो, ऐसे आठ बोलों में से दूसरे बोल का क्या नाम है?

उत्तर – 'जीव और पुद्‌गल के निश्चय-व्यवहार के बन्ध का ज्ञान' यह दूसरे बोल का नाम है।

प्रश्न 11 – जीव में निश्चयबन्ध क्या है?

उत्तर – आत्मा में राग-द्वेषादि का बन्ध होना, यह जीव का निश्चयबन्ध है।

प्रश्न 12 – आत्मा और राग-द्वेषादि में बन्ध की परिभाषा कैसे घटेगी?

उत्तर - (1) 'रागी जीव' - यह सम्बन्धविशेष है। (2) एक आत्मा है, दूसरा राग-द्वेष है, यह दो वस्तुएँ हुयीं। (3) आत्मा और राग-द्वेष में एकपने का कथन होता है, तथा (4) ज्ञानी दोनों का स्वरूप पृथक्-पृथक् जानते हैं, क्योंकि राग-द्वेषादि का स्वरूप, बन्धस्वरूप और आत्मा का स्वरूप, अबन्धस्वरूप चैतन्यस्वभावी हैं। इसलिए आत्मा और राग-द्वेषादि में बन्ध की परिभाषा घटित होती है।

प्रश्न 13 - जीव के निश्चयबन्ध को जानने से ज्ञानियों को क्या लाभ है?

उत्तर - ज्ञानी तो चौथे गुणस्थान से दोनों को पृथक्-पृथक् जानते हैं और अपने चैतन्यस्वभावी आत्मा में स्थिरता करके मोक्ष को प्राप्त हो जाते हैं।

प्रश्न 14 - जीव के निश्चयबन्ध को जानने से अज्ञानी पात्र जीवों को क्या लाभ है?

उत्तर - अज्ञानी, अनादि से एक-एक समय करके राग-द्वेषादिरूप ही अपने को जानता था। जब उसने गुरु से सुना कि राग-द्वेषादि, बन्धस्वरूप पृथक् हैं और भगवान आत्मा, अबन्धस्वभावी पृथक् हैं तो अपनी प्रज्ञारूपी छैनी को अपनी आत्मा के सन्मुख करके धर्म की प्राप्ति कर लेता है और फिर वह भी ज्ञानी की तरह मोक्ष को प्राप्त कर लेता है, यह जीव के निश्चयबन्ध को जानने का लाभ है।

प्रश्न 15 - जीव का व्यवहारबन्ध क्या है?

उत्तर - जीव और द्रव्यकर्म-नोकर्म के सम्बन्ध को जीव का व्यवहारबन्ध कहा जाता है।

प्रश्न 16 - जीव और द्रव्यकर्म-नोकर्म में बन्ध की परिभाषा कैसे घटती है?

उत्तर – जीव एक पदार्थ है; द्रव्यकर्म–नोकर्म दूसरे पदार्थ हैं। स्थूलरूप से एक कहने में आते हैं परन्तु ज्ञानी इनको पृथक्–पृथक् जानते हैं; इसलिए बन्ध की परिभाषा घटती है।

प्रश्न 17 – जीव से द्रव्यकर्म–नोकर्म तो बिल्कुल पृथक् हैं। आपने इसे सम्बन्धविशेष, बन्ध की परिभाषा में कैसे लगा दिया ?

उत्तर – स्थूलरूप से आत्मा और द्रव्यकर्म–नोकर्मरूप शरीर अलग देखने में नहीं आते हैं, एक दिखते हैं; इसलिए बन्ध की परिभाषा घटती है।

प्रश्न 18 – जीव के व्यवहारबन्ध को जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर – जीव की पर्याय में राग–द्वेषादि होते हैं, उसमें द्रव्यकर्म –नोकर्म निमित्त होता है। भगवान अबन्धस्वभावी में निमित्तपना नहीं है। इसलिए पात्रजीव, अबन्धस्वभावी की दृष्टि करके क्रम से लीनता करके सिद्धदशा प्राप्त कर लेता है, जिससे द्रव्यकर्म–नोकर्म का सम्बन्ध कभी भी नहीं होता है; यह व्यवहारबन्ध को जानने का लाभ है।

प्रश्न 19 – जीव और द्रव्यकर्म के व्यवहारबन्ध को जरा स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर – शास्त्रों में योग के कम्पन से प्रकृति और प्रदेश का तथा कषाय से स्थिति और अनुभाग का बन्ध कहा जाता है।

प्रश्न 20 – योग के कम्पन से प्रकृति और प्रदेश का बन्ध होता है – इसमें क्या जानना चाहिए ?

उत्तर – जीव में योगरूप कम्पन हुआ, वह अपने उपादान से

हुआ और प्रकृति-प्रदेशबन्ध अपने उपादान से आया। योगगुण का कम्पन, निमित्त है तो प्रकृति-प्रदेश, नैमित्तिक है और योगगुण का कम्पन, नैमित्तिक है, तो प्रदेश-प्रकृति, निमित्त है - ऐसा सहज ही निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध है; एक दूसरे के कारण कोई नहीं है।

प्रश्न 21 - पात्र जीव क्या जानता है?

उत्तर - (अ) योगगुण में कम्पन हुआ; इसलिए प्रदेश-प्रकृति बन्ध हुआ - ऐसा नहीं है। (आ) प्रकृति-प्रदेश हुआ, तो जीव में कम्पन हुआ - ऐसा नहीं है, क्योंकि दोनों स्वतन्त्र है।

प्रश्न 22 - अज्ञानी क्या मानता है?

उत्तर - योगगुण में कम्पन होने से प्रकृति-प्रदेशबन्ध होता है और प्रकृति-प्रदेशबन्ध होने से कम्पन होता है - अज्ञानी ऐसा मानता है। यह बुद्धि, निगोद का कारण हैं।

प्रश्न 23 - मिथ्यात्व-राग-द्वेषादि से स्थिति और अनुभाग होता है, इसमें क्या जानना चाहिए?

उत्तर - (अ) जीव में मिथ्यात्व-राग-द्वेषादि भाव, जीव की विभावअर्थपर्यायें हैं। यह जीव के अशुद्धउपादान से हैं और कर्म की स्थिति और अनुभागबन्ध, अपने उपादान से है। (आ) जीव के श्रद्धागुण में विभावरूप परिणमन अपने उपादान से है और दर्शनमोहनीय का उदय, अपने उपादान से है। (इ) जीव के चारित्रगुण में विभावरूप परिणमन, जीव के अशुद्धउपादान से है और चारित्र-मोहनीय का उदय, अपने उपादन से है। (ई) श्रद्धागुण के विभाव-परिणमन में और दर्शनमोहनीय के उदय में निमित्त नैमित्तिकसम्बन्ध है; एक दूसरे के कारण नहीं है। (उ) चारित्रगुण के विभावरूप परिणमन में और चारित्रमोहनीय के उदय में निमित्त-नैमित्तिक-

सम्बन्ध है; एक दूसरे के कारण नहीं है।

प्रश्न 24 – कैसी बुद्धि छोड़नी है ?

उत्तर – जीव के कषायभावों से अनुभाग–स्थिति का बन्ध हुआ और जीव के योगगुण के कम्पन से प्रकृति–प्रदेशबन्ध हुआ – यह अनादि काल की खोटी मान्यता छोड़नी है और दोनें स्वतन्त्र अपने –अपने कारण से हैं, यह जानकर, अपने अबन्धस्वभावी भगवान आत्मा का आश्रय लेना, पात्र जीव का कर्तव्य है।

प्रश्न 25 – अनुभाग और स्थितिबन्ध क्या बताता है ?

उत्तर – जीव ने कषायभाव किया – यह बताता है; कराता नहीं है।

प्रश्न 26 – प्रकृति और प्रदेशबन्ध क्या बताता है ?

उत्तर – योगगुण में कम्पन है, यह बताता है; कराता नहीं है।

प्रश्न 27 – द्रव्यकर्म और नोकर्म क्या बताता है ?

उत्तर – जीव में मूर्खता बताता है, कराता नहीं है। जैसे–हमारी गर्दन टेढ़ी हो, तो दर्पण यह बताता है कि गर्दन टेढ़ी है, परन्तु दर्पण, गर्दन को टेढ़ी कराता नहीं है; उसी प्रकार द्रव्यकर्म, नोकर्म यह बताता है कि अभी सिद्धदशा नहीं है, संसारदशा है परन्तु द्रव्यकर्म –नोकर्म, संसारदशा कराता नहीं है।

प्रश्न 28 – पुद्गल का निश्चयबन्ध क्या है ?

उत्तर – एक परमाणु में विशिष्ट प्रकार की पर्याय होती है, वह पुद्गल का निश्चयबन्ध है।

प्रश्न 29 – पुद्गल परमाणु का निश्चबन्ध स्पष्ट समझाईये ?

उत्तर – पुद्गल के स्पर्शगुण की स्निग्ध या रुक्ष पर्याय में दो

अंश हैं; चार अंश हैं; छह अंश हैं; वह स्पर्शगुण की स्निग्ध, रुक्ष-पर्याय में दो अधिक अंश का होना, यह परमाणु का निश्चयबन्ध है।

प्रश्न 30 - पुद्गल का व्यवहारबन्ध क्या है?

उत्तर - (1) औदारिकशरीर, (2) कार्माणशरीर, (3) तैजस-शरीर, ये सब पुद्गल का व्यवहारबन्ध हैं।

प्रश्न 31 - परमाणु में निश्चयबन्ध की परिभाषा कैसे घटित हुई?

उत्तर - परमाणु में स्निग्ध और रुक्ष में दो अंश, चार अंश, यह दूसरी चीज हैं। कहने में एक आता है। ज्ञानी अलग-अलग जानते हैं; इस प्रकार बन्ध की परिभाषा घटित हो जाती है। चार अंश आदि को भी वस्तु कहने में आता है।

प्रश्न 32 - औदारिक, कार्माण, तैजसशरीर में बन्ध की परिभाषा कैसे घटित हुई?

उत्तर - औदारिक आदि शरीर, अनेक पुद्गलों का स्कन्ध है, यह अनेक हैं। कहने में एक आता है। ज्ञानी प्रत्येक परमाणु को पृथक्-पृथक् जानते हैं; इसलिए बन्ध की परिभाषा घट गयी।

प्रश्न 33 - आत्मा, बन्ध और मोक्ष में अकेला है - ऐसा किसी शास्त्र का कथन है?

उत्तर - श्री प्रवचनसार के परिशिष्ट में 45वें नय में बताया है कि 'निश्चयनय से आत्मा अकेला ही बद्ध और मुक्त होता है। जैसे-बन्ध और मोक्ष के योग्य, स्निग्ध या रुक्षत्व परिणमित होता हुआ अकेला परमाणु ही बद्ध और मुक्त होता है, उसी प्रकार' - विचारिए-इसमें बताया है कि आत्मा अपने आप बँधता है और अपने आप मुक्त होता है। यह निश्चयनय का कथन है। परमाणु भी अपनी

स्पर्शगुण की स्निग्ध और रुक्षत्व के कारण दो से ज्यादा अंश होने पर बँधता है और दो से कमी होने पर छूटता है।

प्रश्न 34 – जीव और पुद्गल के व्यवहारनय के विषय में किसी शास्त्र का आधार बताइये?

उत्तर – श्री प्रवचनसार के परिशिष्ट में 44वें नय में बताया है कि 'व्यवहारनय से आत्मा, बन्ध और मोक्ष में पुद्गल के साथ द्वैत को प्राप्त होता है – जैसे, परमाणु के बन्ध में, वह परमाणु अन्य परमाणु के साथ संयोग के पानेरूप द्वैत को प्राप्त होता है और परमाणु के मोक्ष में वह परमाणु, अन्य परमाणु से पृथक् होने पर द्वैत को पाता है, उसी प्रकार' – ऐसा व्यवहारनय से जीव और पुद्गल के लिए कथन किया है।

प्रश्न 35 – जीवबन्ध, पुद्गलबन्ध और उभयबन्ध के विषय में कहीं और कुछ स्पष्ट कहा है तो बताओ?

उत्तर – श्री प्रवचनसार, गाथा 177 में तथा टीका में लिखा है कि (1) 'कर्मों का जो स्निग्धता-रुक्षतारूप स्पर्श विशेषों के साथ एकत्व परिणाम है, सो केवल पुद्गलबन्ध है। (2) जीव का औपाधिक मोह-राग-द्वेषरूप पर्यायों के साथ जो एकत्वपरिणाम है, सो केवल जीवबन्ध है। (3) जीव तथा कर्म पुद्गलों के परस्पर परिणाम के निमित्तमात्र से जो विशिष्टतर परस्पर अवगाह है, सो उभयबन्ध है, अर्थात् जीव और कर्म पुद्गल एक दूसरे के परिणाम में निमित्तमात्र होवे, ऐसा जो (विशिष्ट प्रकार का खास प्रकार का) उनका एक क्षेत्रावगाहसम्बन्ध है, सो वह पुद्गल-जीवात्मक बन्ध है।'

प्रश्न 36 – जब एक परमाणु का, दूसरे परमाणु से निश्चय-बन्ध नहीं है, तब जीव के साथ पुद्गल का सम्बन्ध कैसे हो सकता है?

उत्तर - कभी नहीं हो सकता है, क्योंकि पुद्‌गल एक जाति के होते हुए भी उनमें निश्चयबन्ध नहीं है तो फिर जीव का पुद्‌गलों के साथ बन्ध कैसे हो सकता है ? कभी नहीं हो सकता है।

प्रश्न 37 - जीव और पुद्‌गल के बन्ध के विषय में क्या बात याद रखना चाहिए ?

उत्तर - (1) जीव और पुद्‌गल के बन्ध को व्यवहारबन्ध कहा है। वह दोनों स्वतन्त्ररूप से अपने-अपने उपादान से हैं; एक दूसरे के कारण नहीं हैं। (2) आत्मा और कर्म के साथ बन्ध होता है, यह ज्ञान कराने के लिए सच्ची बात है। (3) आत्मा, कर्म से बँधता है, यह श्रद्धा छोड़नी है। (4) मेरे में जो राग-द्वेष होता है, यह निश्चयबन्ध है। जब तक जीव अपने अबन्धस्वभावी भगवान आत्मा का और राग-द्वेष मेरे में मेरी मूर्खता से एक समय का है - ऐसा नहीं जानेगा, तब तक दूसरे के दोष निकालता रहेगा और संसार परिभ्रमण मिटेगा नहीं।

प्रश्न 38 - संसार के अभाव के लिए क्या करना ?

उत्तर - मैं अनादि-अनन्त चैतन्यस्वभावी भगवान हूँ; मेरी एक समय की पर्याय में मूर्खता मेरे अपराध से है - ऐसा जानकर, अपनी ज्ञान की पर्याय को अपनी ओर सन्मुख करे, तो मिथ्यात्व का अभाव होकर सम्यक्त्वादि की प्राप्ति होकर, क्रम से मोक्ष का पथिक बने। यह दूसरे बोल का सार है।

प्रश्न 39 - आत्महितकारी तीसरा बोल क्या है ?

उत्तर - 'इन्द्रियज्ञान की मर्यादा क्या है' यह तीसरा बोल है।

प्रश्न 40 - क्या इन्द्रियों से ज्ञान नहीं होता है ?

उत्तर - कभी भी नहीं होता है क्योंकि ज्ञान तो ज्ञानगुण में से आता है; इन्द्रियों से नहीं।

प्रश्न 41 – क्या इन्द्रियज्ञान से तात्त्विक निर्णय नहीं होता है ?

उत्तर – कभी भी नहीं होता है। इसलिए इन्द्रियसुख की तरह इन्द्रियज्ञान भी तुच्छ है। अतीन्द्रियसुख और अतीन्द्रियज्ञान ही उपादेय है; अतः अतीन्द्रियज्ञाान से ही तात्त्विक निर्णय होता है।

प्रश्न 42 – तात्त्विक निर्णय में इन्द्रियाँ, निमित्त नहीं हैं, तो कौन निमित्त है ?

उत्तर – आगम, निमित्त है। यदि अपने आत्मा का आश्रय लेकर अपना निर्णय करे तो उपचार से आगम को निमित्त कहा जाता है; इन्द्रियों को नहीं।

प्रश्न 43 – इन्द्रियज्ञान दुःखरूप और हेय है, ऐसा कहाँ लिखा है ?

उत्तर – श्री प्रवचनसार, गाथा 55 की टीका में लिखा है कि 'आत्मा, पदार्थ को स्वयं जानने के लिए असमार्थ होने से उपात्त (इन्द्रिय, मन इत्यादि उपात्त परपदार्थ हैं) और अनुपात्त (प्रकाश इत्यादि अनुपात्त परपदार्थ हैं) परपदार्थरूप सामग्री को ढूँढ़ने की व्यग्रता से अत्यन्त चंचल-तरल-अस्थिर बर्तता हुआ, अनन्त शक्ति से च्युत होने से अत्यन्त विकल्प वर्तता हुआ (घबराया हुआ) महा मोह-मल्ल के जीवित होने से, परपरिणति का (परको परिणमित करने का) अभिप्राय करने पर भी पद-पद पर (पर्याय, पर्याय में) ठगाता हुआ, परमार्थतः अज्ञान में गिने जाने योग्य हैं; इसलिए वह हेय है।'

प्रश्न 44 – आत्महित के लिये चौथा बोल क्या है ?

उत्तर – विकारी और अविकारी पर्यायों की स्वतन्त्रता का ज्ञान।

प्रश्न 45 – विकारी, अविकारी पर्यायों की स्वतन्त्रता के ज्ञान से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – विकारीपर्याय और अविकारीपर्याय, चाहे जीव की हो या अजीव की हो, वह अपने-अपने में स्वतन्त्ररूप से होती हैं। उनका कर्ता, द्रव्य स्वयं ही है; दूसरा अन्य कोई कर्ता नहीं है।

प्रश्न 46 – क्या जीव-पुद्‌गल की विकारीपर्यायें स्वतन्त्र हैं?

उत्तर – हाँ, दोनों की स्वतन्त्र हैं। यदि जीव यह जाने कि विकार मेरी गलती से ही है तो गलतीरहित स्वभाव का आश्रय लेकर, गलती का अभाव कर सकता है; और यह जाने कि गलती पर ने करायी है तो कभी दूर नहीं कर सकता है। इसलिए जीव, विकार करने में भी स्वतन्त्र है और मिटाने में भी स्वतन्त्र है।

प्रश्न 47 – विकारी, अविकारीपर्याय स्वतन्त्र है- ऐसा शास्त्रों में कहाँ आया है?

उत्तर – श्री समयसार, जयसेनाचार्यकृत, सूरत से प्रकाशित गाथा 102, पृष्ठ 98 में लिखा है कि '..........जो शुभ और अशुभभाव करता है, उस भाव का स्वतन्त्ररूप से स्पष्टपने कर्ता होता है और उस आत्मा का वह शुभ-अशुभपरिणाम, भावकर्म होता है, क्योंकि वह भाव, आत्मा द्वारा किया गया है।'

श्री प्रवचनसार, ज्ञेय अधिकार श्री जयसेनाचार्य कृत टीका, गाथा 122 में लिखा है कि 'जो क्रिया, जीव ने स्वाधीनता से शुद्ध या अशुद्ध उपादानकारणरूप से प्राप्त की है, वह क्रिया, जीव का कर्म है, यह सम्मत है। यहाँ कर्म शब्द से जीव से अभिन्न चैतन्यकर्म को लेना चाहिए। इसी को भावकर्म या निश्चयकर्म भी कहते हैं...... इसी प्रकार पुद्‌गल भी जीव के समान निश्चय से अपने परिणामों का ही कर्ता है।'

प्रश्न 48 – कैसी श्रद्धा करनी चाहिए?

उत्तर – प्रत्येक जीव और पुद्गल की पर्याय, विकारी हो या अविकारी हो, वह स्वतन्त्ररूप से होती है – ऐसी श्रद्धा करनी चाहिए।

प्रश्न 49 – कैसी श्रद्धा छोड़नी चाहिए?

उत्तर – जीव और पुद्गल की पर्याय, एक दूसरे से होती है – ऐसी मिथ्याश्रद्धा छोड़नी चाहिए।

प्रश्न 50 – जीव में विकारीपर्यायें स्वतन्त्र होती हैं, इसे जानने से क्या लाभ है?

उत्तर – (1) विकारीपर्यायें, अशुद्ध निश्चयनय का विषय है, तो शुद्धनिश्चय का (उसके विषयभूत त्रिकाली स्वभाव का) आश्रय लेकर अभाव कर सकता है। (2) विकारीपर्यायें, पर्यायार्थिकनय का विषय है, तो द्रव्यार्थिकनय (के विषयभूत त्रिकाली स्वभाव) का आश्रय लेकर, अभाव कर सकता है। (3) विकारीपर्यायें, पराश्रितो व्यवहार है, तो स्वाश्रितो निश्चय का आश्रय लेकर उसका अभाव कर सकता है। (4) विकारीपर्यायें, औदयिकभाव है, तो पारिणामिकभाव का आश्रय लेकर, उसका अभाव कर सकता है। (5) विकारीपर्याय, अशुद्धपारिणामिकभाव है तो परमशुद्ध-पारिणामिकभाव का आश्रय लेकर, उसका अभाव कर सकता है; इसलिए विकारीपर्यायें स्वतन्त्र हैं।

प्रश्न 51 – आत्महितकारी पाँचवाँ बोल क्या है?

उत्तर – 'विकारीपर्याय को पराश्रित क्यों कहा है' यह पाँचवाँ बोल है।

प्रश्न 52 – जब विकारीपर्यायें स्वतन्त्र हैं तो शास्त्रों में विकारीपर्यायों को पराश्रित क्यों कहा है?

उत्तर – विकारीपर्याय स्वतन्त्र होते हुए भी, विकार में पर का निमित्त होता है; इसलिए विकारीपर्यायों को पराश्रित कहा है। पराश्रित कहने से 'पर से हुआ है' – ऐसा अर्थ नहीं है।

प्रश्न 53 – विकारीपर्याय को पराश्रित किस शास्त्र में कहा है?

उत्तर – श्री परमात्मप्रकाश, गाथा 174 में लिखा है कि 'यह प्रत्यक्षभूत स्वसंवेदनज्ञानकर प्रत्यक्ष जो आत्मा, वही शुद्ध निश्चयकर अनन्त चतुष्टयस्वरूप, क्षुधादि अठारह दोषरहित निर्दोष परमात्मा है तथा वह व्यवहारनयकर अनादि कर्मबन्ध के विशेष से पराधीन हुआ दूसरे का जाप करता है।'

श्री समयसार में कहा है –

'इससे करो नहिं राग वा, संसर्ग, उभय कुशील का'
इस कुशील के संसर्ग से है, नाश तुझ स्वातन्त्र्य का॥

इसलिए इन दोनों कुशीलों के साथ राग मत करो, अथवा संसर्ग भी मत करो, क्योंकि कुशील के साथ संसर्ग और राग करने से स्वाधीनता का नाश होता है।

प्रश्न 54 – क्या श्रद्धा करनी और क्या श्रद्धा छोड़नी चाहिए?

उत्तर – (1) पर के आश्रय से स्वाधीनता नष्ट होती है। इसने अपना आश्रय छोड़ा है, तो पर के साथ सम्बन्ध जोड़ा है, यह कहने में आता है। वास्तव में ऐसा है नहीं, ऐसी श्रद्धा करनी। (2) पर के आश्रय से कुछ भी होता है – ऐसी खोटी मान्यता छोड़नी है, क्योंकि जिनेन्द्रभगवान इससे सहमत नहीं हैं।

प्रश्न 55 – जिनेन्द्रभगवान किससे सहमत नहीं हैं?

उत्तर – दो द्रव्य की क्रियाओं को एक द्रव्य करता है, इससे सहमत नहीं हैं।

प्रश्न 56 – आत्महितकारी छठवाँ बोल क्या है ?

उत्तर – 'जब विकारीपर्यायें स्वतन्त्र हैं, तो शास्त्रों में स्व-पर प्रत्ययों को क्यों कहा है' यह छठवाँ बोल है।

प्रश्न 57 – विकारीपर्यायें स्वतन्त्र हैं तो स्व-पर प्रत्यय क्यों कहे गये हैं ?

उत्तर – उपादान और निमित्त का ज्ञान कराने के लिए स्व-पर प्रत्यय कहे गए हैं क्योंकि जहाँ उपादान होता है, वहाँ निमित्त होता है – ऐसा वस्तु-स्वभाव है।

प्रश्न 58 – स्व-पर प्रत्यय से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – जहाँ पर दो कारण बताने में आवें, तब स्व-पर प्रत्यय कहा जाता है। जैसे – जीव-पुद्गल चले तो धर्मद्रव्य को निमित्त कहा जाता है। जीव-पुद्गल में क्रियावतीशक्ति का गमनरूप परिणमन, स्व और धर्मद्रव्य के गहिहेतुत्व का परिणमन, पर; इस प्रकार स्व-पर प्रत्यय कहे जाते हैं।

प्रश्न 59 – स्व-पर प्रत्यय के लिए कोई शास्त्राधार दीजिए ?

उत्तर – श्री प्रवचनसार, जयसेनाचार्य कृत टीका गाथा 9 में लिया है कि 'जैसे स्फटिकमणि विशेष निर्मल है, परन्तु जपा पुष्पादि लाल, काले, श्वेत उपाधिवश से लाल-श्वेत वर्णरूप होता है।' इसमें बताया है स्फटिक, निर्मल होने पर भी, लाल-काला स्वतन्त्र परिणमन से हुआ है; पर से नहीं लेकिन पर निमित्त होता है; उसी प्रकार आत्मा, स्वभाव से शुद्ध होने पर भी, उसकी पर्याय में विकार है और कर्म, निमित्त है परन्तु विकार, कर्म के कारण नहीं हैं।

(इसके लिए विशेषरूप से श्री प्रवचनसार, गाथा 126 की टीका देखें।)

प्रश्न 60 – व्यवहार में पर की बात क्यों कही गयी ?

उत्तर – पर का आश्रय कहने में आता है, यह व्यवहारकथन है। पर कराता है – ऐसी अनादि की खोटी मान्यता छोड़कर, अपना आश्रय लेकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति कर, क्रम से निर्वाण होना, यह इसे जानने का लाभ है।

प्रश्न 61 – श्री पञ्चास्तिकाय, गाथा 62 में क्या बताया है ?

उत्तर – सर्व द्रव्यों की प्रत्येक पर्यायों में छह कारक एक साथ वर्तते हैं; इसलिए आत्मा और पुद्गल, शुद्धदशा में या अशुद्धदशा में स्वयं छहों कारकरूप परिणमन करते हैं; दूसरे निमित्त कारकों की अपेक्षा नहीं रखते हैं।

प्रश्न 62 – यह छठवाँ विभाग क्यों किया ?

उत्तर – अज्ञानी, अनादि से एक-एक समय करके पर के साथ का सच्चा सम्बन्ध मानता है। उस झूठी मान्यता को छुड़ाने के लिए और राग का भी आश्रय छोड़कर अपने त्रिकाली आत्मा का आश्रय लेकर धर्म की प्राप्ति करे, इसलिए छठवाँ विभाग किया है।

प्रश्न 63 – आत्महितकारी सातवाँ बोल क्या है ?

उत्तर – 'प्रत्येक स्कन्ध में प्रत्येक परमाणु अपना-अपना स्वतन्त्र कार्य करता है।' उसका ज्ञान कराने के लिए सातवाँ बोल है।

प्रश्न 64 – पुद्गल के कितने भेद हैं ?

उत्तर – परमाणु और स्कन्ध, यह दो भेद हैं।

प्रश्न 65 – स्कन्ध कितने परमाणुओं को कहते हैं ?

उत्तर – दो से लेकर अनन्तानन्त परमाणुओं तक सब स्कन्ध कहलाते हैं।

प्रश्न 66 – क्या स्कन्ध स्वतन्त्र द्रव्य नहीं है ?

उत्तर – नहीं है; परमाणु ही स्वतन्त्र द्रव्य है।

(1) श्री नियमसार, गाथा 20 में लिखा है कि 'परमाणु, वह स्वभावपुद्गल है और स्कन्ध, वह विभावपुद्गल है।' (2) गाथा 21 से 24 तक में लिखा है कि यह विभावपुद्गल के स्वरूप कथन है। (3) गाथा 29 की टीका में लिखा है कि शुद्ध निश्चयनय से स्वभाव शुद्ध पर्यायात्मक परमाणु को ही 'पुद्गल द्रव्य' ऐसा नाम होता है; अन्य स्कन्ध पुद्गलों को व्यवहारनय से विभाव पर्यायात्मक पुद्गलपना उपचार द्वारा सिद्ध होता है। इस प्रकार परमाणु को निश्चयद्रव्य कहा है और स्कन्ध को व्यवहार से पुद्गल कहा है।

(4) श्री पञ्चास्तिकाय, गाथा 76 में 'बादर और सूक्ष्मरूप से परिणत स्कन्धों को 'पुद्गल' ऐसा व्यवहार है।' (5) गाथा 81 में लिखा है कि 'सर्वत्र परमाणु में रस-वर्ण-स्कन्ध-स्पर्श सहभावी गुण होते हैं और वे गुण, उसमें क्रमवती निज पर्यायोंसहित बर्तते हैं। ....और स्निग्ध-रुक्षत्व के कारण बन्ध होने से अनेक परमाणुओं की एकत्व परिणतिरूप, स्कन्ध के भीतर रहा हो, तथापि स्वभाव को न छोड़ता हुआ, संख्या को प्राप्त होने से (अर्थात्, परिपूर्ण एक की भाँति पृथक् गिनती में आने से) अकेला ही द्रव्य है।

इसमें बताया है कि स्कन्ध में भी प्रत्येक परमाणु स्वयं परिपूर्ण हैं, स्वतन्त्र हैं। पर की सहायता से रहित और अपने से ही अपने गुण-पर्यायों में स्थित है।

प्रश्न 67 – स्कन्ध, स्वतन्त्र द्रव्य है। इसके लिए श्री समयसार में कहीं कुछ बताया है ?

उत्तर – श्री समयसार, गाथा 27 में लिखा है कि 'जैसे इस लोक

में सोने और चाँदी को गलाकर एक कर देने से एक पिण्ड का व्यवहार होता है; उसी प्रकार आत्मा और शरीर की परस्पर एक क्षेत्र में रहने की अवस्था होने से एकपने का व्यवहार होता है। यों व्यवहार से ही आत्मा और शरीर का एकपना है परन्तु निश्चय से देखा जावे तो जैसे पीलापन आदि और सफेदी आदि जिसका स्वभाव ऐसे सोने और चाँदी में अत्यन्त भिन्नता होने से, उनमें एक पदार्थपने की असिद्धि है। इसलिए अनेकत्व ही है।' व्यवहारनय, जीव और शरीर को एक कहता है किन्तु निश्चयनय से एक पदार्थपना नहीं हैं।

प्रश्न 68 – क्या प्रत्येक स्कन्ध में प्रत्येक परमाणु अलग-अलग है?

उत्तर – स्कन्ध में जितने परमाणु हैं, उनमें प्रत्येक परमाणु पूर्णरूप से अपना ही कार्य करता है, दूसरे का बिल्कुल नहीं करता – ऐसा ही केवली के ज्ञान में आया है और ऐसा ही ज्ञानी जानते हैं।

प्रश्न 69 – आत्महितकारी आठवाँ बोल क्या है?

उत्तर – 'अर्थपर्याय और व्यंजनपर्याय के विषय में मिथ्या मान्यता क्या है' यह आठवाँ बोल है।

प्रश्न 70 – पर्याय कितने समय की है?

उत्तर – व्यंजनपर्याय हो या अर्थपर्याय हो, चाहे वह स्वभावरूप हो या विभावरूप हो; सब एक-एक समय की ही होती हैं, ज्यादा समय की कोई भी पर्याय नहीं होती है।

प्रश्न 71 – श्री पञ्चास्तिकाय, जयसेनाचार्य कृत टीका, गाथा 16 में लिखा है कि 'अर्थपर्यायें अत्यन्त सूक्ष्म, क्षण-क्षण में होकर नष्ट होनेवाली है, जो वचन के गोचर नहीं हैं; व्यंजनपर्याय, जो देर तक रहे और स्थूल होती है, अल्पज्ञानी को भी दृष्टिगोचर

होती है, वह व्यंजनपर्याय है'; अतः व्यंजनपर्याय एक समय की होती है, यह बात मिथ्या सिद्ध हुयी ?

उत्तर – अरे भाई ! व्यंजनपर्याय भी एक ही समय की होती है परन्तु समय-समय की होकर, वैसी की वैसी होने से, देर तक रहे – स्थूल होती है – अल्पज्ञानी को भी दृष्टिगोचर होती है, यह कहा जाता है; वास्तव में ऐसा हैं नहीं।

प्रश्न 72 – शास्त्रों में दर्शनमोहनीयकर्म की सत्तर कोड़ाकोड़ी स्थिति बतलायी, वहाँ एक-एक समय की पर्याय कहाँ रही ?

उत्तर – शास्त्रों में जो दर्शनमोहनीय की सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति बतायी है, उसका आशय यह है कि वह स्कन्ध कब तक रहेगा, अर्थात् एक-एक समय बदलकर सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर तक रहेगा।

प्रश्न 73 – एक-एक समय का एक-एक भव है, ऐसा शास्त्रों में कहाँ बताया है ?

उत्तर – श्री भावपाहुड़, गाथा 32 की टीका में लिखा है कि '...... जो आयु का उदय समय-समय करि घटे है, सो समय-समय का मरण है, ये आविचिका मरण है।'

इसमें बताया है कि जीव, समय-समय में मरता है, क्योंकि पर्याय एक-एक समय की होती है। वास्तव में एक-एक समय का एक-एक भव है, क्योंकि सूक्ष्मऋजुसूत्रनय की अपेक्षा गति कितनी देर तक चलेगी, यह बात भावपाहुड़ में बतायी है। इसलिए 'जैसी मति, वैसी गति' होती और 'जैसी गति, वैसी मति' होती है।

प्रश्न 74 – 'जैसी मति-वैसी गति' से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – जीव जिस समय जैसा भाव करता है, वह उस समय

वह ही है, यह तात्पर्य है। जैसे – मनुष्यभव होने पर घर में ज्यादा आदमी हैं वहाँ आँख लाल-पीली न करें और जरा फूँफाँ न करे तो लोग बिगड़ जावें, ऐसा जानकर जो जीव फूँफाँ करता है, वह उस समय साँप ही है।

प्रश्न 75 – 'जैसी गति, वैसी मति' से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर – जैसे – कोई जीव, साँप बन गया, तो वहाँ वह एक-एक समय करके फूँफाँ ही करता रहेगा, अर्थात् वैसा का वैसा करता रहने की अपेक्षा 'जैसी गति, वैसी मति'; कहा जाता है परन्तु सब जगह पर्याय एक ही समय की होती है – ऐसा जानना।

प्रश्न 76 – शब्द तो स्कन्धों की पर्याय है, उसमें एक समय की बात किस प्रकार है ?

उत्तर – जब तक परमाणु रहता है, तब तक उसका शब्दरूप परिणमन नहीं है। स्कन्धरूप पर्याय में अपनी योग्यता से शब्दरूप पर्याय होती है। शब्दरूप स्कन्ध में एक-एक परमाणु अलग-अलग स्वतन्त्र परिणमन कर रहा है।

प्रश्न 77 – जीव के विकारीभावों के विषय में और द्रव्यकर्म उदय आदि के विषय में क्या जानना चाहिए ?

उत्तर – जीव में एक-एक समय में जो विकारीभाव होता है, वैसा-वैसा अपनी योग्यता से पुद्गलों में भी समय-समय परिणमन होता है। जैसे जीव में क्षयोपशमभाव हुआ तो द्रव्यकर्म में भी क्षयोपशमभाव, एक समयपर्यन्त स्वतन्त्र होते हैं।

प्रश्न 78 – जब जीव में भावकर्म हुआ, तब द्रव्यकर्म होता है- ऐसा कहीं लिखा है ?

उत्तर – (1) आत्मावलोकन में लिखा है कि 'भाववेदनीय,

भावआयु, भावगोत्र, उसके सामने द्रव्यवेदनीय, द्रव्यआयु, द्रव्य-नाम, द्रव्यगोत्र होता है।'

(2) श्री प्रवचनसार, गाथा 16 की टीका के अन्त में लिखा है कि 'द्रव्य तथा भाव घातिकर्मों को नष्ट करके, स्वयंमेव आविर्भूत हुआ।'

प्रश्न 79 - जब जीव में भावकर्म हुआ, तब द्रव्यकर्म स्वयंमेव अपनी योग्यता से होता है - इससे हमें क्या लाभ है?

उत्तर - (1) एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है। (2) प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं; प्रत्येक गुण में हर समय एक पर्याय का व्यय और दूसरी पर्याय की उत्पत्ति; गुण वैसा का वैसा रहता है। ऐसा प्रत्येक द्रव्य के, प्रत्येक गुण में, अनादि से हुआ है, वर्तमान में हो रहा है और भविष्य में ऐसा ही होता रहेगा। ऐसी सब द्रव्यों में द्रव्य-गुण पर्यायस्वरूप पारमेश्वरी व्यवस्था है; उसे तीर्थङ्कर देव आदि कोई भी हेर-फेर नहीं कर सकते हैं। ऐसा जानकर, अपने त्रिकाली भगवान की दृष्टि करके सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके, क्रम से मोक्ष का पथिक बनना, प्रत्येक पात्र जीव का परम कर्तव्य है। ●●

वस्तुस्वरूप समझने

पाँच बोल	नौ पदार्थ	काल	पाँच भाव	सुखदायक दु:खदायक	हेय, ज्ञेय, उपादेय
1. **संयोग**	अजीवतत्त्व	अनादि-अनन्त	×	×	ज्ञेय
2. **संयोगी भाव**	आस्रव-बंध पुण्य-पाप	अनादि सांत	औदयिक भाव	दु:खदायक	हेय
3. **स्वभाव त्रिकाली**	जीवतत्त्व	अनादि-अनन्त	पारिणामिक भाव	परम सुखदायक	परम उपादेय (आश्रय करने योग्य)
4. **स्वभाव के साधन**	संवर-निर्जरा	सादिसांत	औपशमिक, धर्म का क्षायोपशमिक श्रद्धा-चारित्र का क्षायिक-भाव	एकदेश सुखदायक	एकदेश उपादेय (प्रगट करने योग्य)
5. **सिद्धत्व**	मोक्ष	सादि-अनन्त	पूर्ण क्षायिक भाव	पूर्ण सुखदायक	पूर्ण उपादेय (प्रगट करने योग्य)

समझाने का मानचित्र

उत्तम क्षमा	ईर्यासमिति	वचन-गुप्ति	क्षुधा-परिषहजय	नमस्कार	संयोग की पृथकता आदि तीन बोल
जड़ उत्तमक्षमा	जड़ ईर्यासमिति	जड़ वचन -गुप्ति	जड़ क्षुधापरिषह -जय	जड़ नमस्कार	संयोग की पृथक्ता
द्रव्य उत्तमक्षमा	द्रव्य ईर्या -समिति	द्रव्य वचन -गुप्ति	द्रव्य क्षुधापरिषह -जय	द्रव्य नमस्कार	विभाव की विपरीतता
शक्तिरूप उत्तमक्षमा	शक्तिरूप ईर्यासमिति	शक्तिरूप वचन -गुप्ति	शक्तिरूप क्षुधापरिषह -जय	शक्तिरूप नमस्कार	परम स्वभाव की सामर्थ्यता
एकदेश भाव उत्तमक्षमा	एकदेश भाव ईर्यासमिति	एकदेश भाव वचन -गुप्ति	एकदेश भाव क्षुधापरिषह -जय	एकदेश भाव नमस्कार	एकदेश स्वभाव की सामर्थ्यता
पूर्ण भाव उत्तमक्षमा	पूर्ण भाव ईर्यासमिति	पूर्ण भाव वचनगुप्ति	पूर्ण भाव क्षुधापरिषह -जय	पूर्ण भाव नमस्कार	पूर्ण स्वभाव की सामर्थ्यता

(22)

मानचित्र से वस्तु स्वरूप समझने-समझाने का सरल उपाय

प्रश्न 1 - संयोग आदि पाँच बोल की पहिचान कैसे करनी चाहिए।

उत्तर - (1) **संयोग** — अपनी आत्मा को छोड़कर विश्व के अनन्त जीव, अनन्तान्त पुद्गल, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य; (2) **संयोगीभाव** — शुभाशुभ विकारीभाव; (3) **स्वभाव त्रिकाली** — ज्ञान-दर्शनादि अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड निज आत्मा; (4) **स्वभाव के साधन** — एकदेश प्रगट वीतरागदशा; (5) **सिद्धत्व** — परिपूर्ण प्रगट क्षायिकदशा।

प्रश्न 2 - संयोगादिक पाँच बोल क्या बताते हैं ?

उत्तर - अपने त्रिकाली ज्ञायकस्वभाव का आश्रय लेने से स्वभाव के साधन की प्राप्ति होती हैं और स्वभाव त्रिकाली का पूर्ण आश्रय लेने से सिद्धत्व की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिकानुसार जो वीतराग-सर्वज्ञ आदि के प्रति बहुमान का राग आता है, वह संयोगीभाव है। संयोगीभाव और संयोग का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, जो ज्ञानियों को व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी को इस रहस्य का पता नहीं, वह संयोगों से सम्बन्ध मानकर

संयोगीभावों की पुष्टि करता हुआ, चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद चला जाता है।

प्रश्न 3 - नौ पदार्थों की पहिचान कैसे करनी चाहिए ?

उत्तर - (1) जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन हो, वह जीवतत्त्व है। (2) जिसमें मेरा ज्ञान-दर्शन नहीं, वह अजीवतत्त्व है। (3) शुभाशुभ विकारीभावों का उत्पन्न होना, आस्रवतत्त्व है। (4) शुभाशुभ विकारीभावों में अटकना, बन्धतत्त्व है। (5) दया-दानादि का भाव, पुण्यतत्त्व है। (6) हिंसादि का भाव, पापतत्त्व है। (7) शुद्धि का प्रकट होना, संवरतत्त्व है। (8) शुद्धि की वृद्धि, निर्जरातत्त्व है। (9) परिपूर्ण शुद्धदशा का प्रगट होना, मोक्षतत्त्व है।

प्रश्न 4 - नौ पदार्थों का संयोगादि पाँच बोलों में लगाओ ?

उत्तर - (1) जीव, स्वभाव त्रिकाली; (2) अजीव, संयोग; (3) आस्रव-बन्ध, पुण्य-पाप, संयोगी भाव; (4) संवर-निर्जरा, स्वभाव के साधन; और (5) मोक्ष, सिद्धत्व।

प्रश्न 5 - नौ पदार्थों क्या बताते हैं ?

उत्तर - अपने जीवतत्त्व का आश्रय लेने से संवर-निर्जरातत्त्व की प्राप्ति होती है और अपने जीवतत्त्व का पूर्ण आश्रय लेने से मोक्षतत्त्व की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिकानुसार जो वीतराग-सर्वज्ञ आदि के प्रति बहुमान का राग आता है, वह आस्रव-बन्धतत्त्व और अजीवतत्त्व का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है; जो ज्ञानियों को व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता है, वह अजीवतत्त्व से अपना सम्बन्ध मान कर आस्रव-बन्धतत्व की पुष्टि करता हुआ चारों गतियों में भ्रमण करता हुआ निगोद में चला जाता है; इसलिए पात्र जीवों को नौ पदार्थों का सच्चा स्वरूप जानकर, अपना कल्याण कर लेना चाहिए।

प्रश्न 6 - चार काल की पहिचान कैसे हो ?

उत्तर - (1) **अनादि अनन्त** — जिसका तीन काल, तीन लोक में कभी अभाव न हो, ऐसे जाति अपेक्षा छह द्रव्य और गुण हैं; (2) **अनादि-सान्त** — राग-द्वेष का भाव, अनादि से चला आ रहा है, उसका उत्पन्न न होना; (3) **सादि-सान्त** — स्वभाव का आश्रय लेने से एकदेश वीतरागता प्रगट होती है और मोक्ष होने पर समाप्त हो जाती है, (4) **सादि-अनन्त** — क्षायिकदशा प्रगट होने पर उसका अभाव कभी नहीं होता।

प्रश्न 7 - इन चारों कालों को पाँच संयोगादि बोली में लगाओ ?

उत्तर - चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 8 - चार काल क्या बताते हैं ?

उत्तर - पात्र जीव, ज्ञान-दर्शनरूप अपना स्वभाव जो अनादि-अनन्त है, उसका आश्रय लेता है तो सादि-सान्त दशा की प्राप्ति होती है और अपने अनादि-अनन्त स्वभाव का पूर्ण आश्रय लेता है तो सादि-अनन्त दशा की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिकानुसार जो वीतराग-सर्वज्ञ आदि के प्रति बहुमान का राग आता है, वह अनादि-सान्त है। शरीर मन-वाणी जो परद्रव्य हैं, वह अनादि-अनन्त है। अनादि-सान्त अस्थिरता का राग और परद्रव्य जो अनादि-अनन्त हैं, उनका निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, जो ज्ञानियों का व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता। वह अनादि-अनन्त जो परवस्तुएँ हैं, उनमें पागल बना रहता है। इस प्रकार वह अनादि-अनन्त तेली के बैल की तरह चारों गतियों में घूमता रहता है। इसलिए पात्र जीवों को चार कालों का रहस्य जानना चाहिए।

प्रश्न 9 - पाँच भाव की पहिचान कैसे हो ?

उत्तर - (1) औपशमिकभाव — धर्म की शुरुआतवाला भाव; (2) क्षायिकभाव — परिपूर्ण शुद्धता; (3) धर्म का क्षायोपशमिकभाव — साधकदशा (4) औदयिकभाव — संयोगी भाव (5) पारिणामिक-भाव — अनादि-अनन्त एकरूप रहनेवाला त्रिकाली स्वभाव।

प्रश्न 10 - पाँच भावों को संयोगादि पाँच बोलों में लगाओ ?

उत्तर - चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 11 - पाँच भाव क्या बताते हैं ?

उत्तर - पारिणामिकभाव का आश्रय लेने से, प्रथम औपशमिक-भाव की प्राप्ति होकर, धर्म का क्षयोपशमभाव प्रगट होता है; और पारिणामिकभाव का पूर्ण आश्रय लेने से पूर्ण क्षायिकभाव प्रगट होता है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिका-अनुसार जो वीतराग-सर्वज्ञ आदि के प्रति बहुमान का राग आता है, वह औदायिकभाव है, जो ज्ञानियों का व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इन पाँच भावों का रहस्य नहीं जानता है। वह पाँच भावों के नाम, लक्षण आदि सीख लेता है; उनसे अपनी महिमा मान लेता है, इस कारण चारों गतियों में घूमकर निगोद में चला जाता है। इसलिए पात्र जीवों को, ज्ञानियों के समागम में रहकर पाँच भावों का रहस्य जानकर अपना कल्याण कर लेना चाहिए।

प्रश्न 12 - सुखदायक-दुखदायक की पहिचान कैसे हो ?

उत्तर - (1) अपनी आत्मा सदा परम सुखदायक; (2) एकदेश वीतरागता, एकदेश प्रगट करनेयोग्य सुखदायक; (3) परिपूर्ण क्षायिकदशा, पूर्ण प्रगट करनेयोग्य पूर्ण सुखदायक; (4) शुभाशुभ विकारीभाव, दु:खदायक; (5) संयोग, न सुखदायक और न दु:खदायक; मात्र ज्ञान का ज्ञेय है।

प्रश्न 13 – सुखदायक-दुखदायक को संयोगादि पाँच बोलों में लगाओ ?

उत्तर – चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 14 – सुखदायक-दुखदायक में क्या रहस्य है ?

उत्तर – परम सुखदायक अपनी आत्मा की ओर दृष्टि करने से, एकदेश सुखदायकपना प्रगट होता है और परम सुखदायक अपनी आत्मा का पूर्ण आश्रय लेने से पूर्ण सुखदायकपना प्रगट होता है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिका अनुसार जो वीतराग-सर्वज्ञदेव आदि के प्रति बहुमान का राग आता है, वह दुःखदायक है। दुःखदायक भाव का और निमित्तरूप परवस्तु का निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है, जो ज्ञानियों का व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता, वह संयोगों को ही सुखदायक-दुःखदायक मानकर, उसी में पागल बना रहता है। इस कारण चारों गतियों में घूमता रहता है। पात्र जीवों को सुखदायक-दुःखदायक का रहस्य जानकर अपना कल्याण तुरन्त कर लेना चाहिए।

प्रश्न 15 – देव-गुरु-धर्म की पहिचान क्या है ?

उत्तर – (1) देव—परिपूर्ण क्षायिक शुद्धि; (2) गुरु—एकदेश वीतरागता; (3) धर्म—सदा एकरूप रहनेवाला स्वभाव।

प्रश्न 16 – देव-गुरु-धर्म को संयोगादि में लगाओ ?

उत्तर – चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 17 – देव-गुरु-धर्म क्या बताते हैं ?

उत्तर – धर्मरूप त्रिकाल अपना आत्मा है। उसका आश्रय लेने से गुरुपने की प्राप्ति होती है, और धर्मरूप त्रिकाली स्वभाव का पूर्ण आश्रय लेने से देवपने की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी

भूमिका अनुसार जो वीतरागी-देव-गुरु के प्रति बहुमान का राग आता है, वह व्यवहार गुरुपना है। शरीर की क्रिया — मस्तक झुकाना, हाथ जोड़ना, साक्षात देव-गुरु का होना आदि जड़ की क्रिया है। व्यवहार गुरुपने का और शरीरी की क्रिया — सच्चेदेव-गुरु आदि की उपस्थिति का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, वह ज्ञानियों को व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता है; वह बाहरी क्रिया देखकर उसी में धर्म मानने लगता है, उसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद है।

प्रश्न 18 - हेय-ज्ञेय-उपादेय की पहिचान क्या है?

उत्तर - (1) हेय—छोड़नेयोग्य; (2) ज्ञेय—जाननेयोग्य; (3) परम उपादेय— अपना आत्मा; (4) एकदेश उपादेय—एकदेश वीतरागता; (5) पूर्ण उपादेय— सम्पूर्ण क्षायिकदशा।

प्रश्न 19 - हेय-ज्ञेय-उपादेय को संयोगादि में लगाओ?

उत्तर - चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 20 - हेय-ज्ञेय-उपादेय में क्या रहस्य है?

उत्तर - परम उपादेय का आश्रय करने से, एकदेश उपादेय की प्राप्ति होती है और परम उपादेय का पूर्ण आश्रय करने से, पूर्ण उपादेय की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिका अनुसार जो वीराग-सर्वज्ञ आदि के प्रति बहुमान का राग आता है, वह हेय है और शरीर आदि की क्रिया-सर्वज्ञदेव-गुरु का होना ज्ञेय है। हेय और ज्ञेय का निमित्त-नैमित्तक सम्बन्ध है, वह ज्ञानियों को व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता। वह भगवान देव-गुरु, शरीर की क्रिया, शुभभावों को ही उपादेय मान लेता है, जिसका फल पंच परावर्तन करना है। इसलिए पात्र-जीवों को हेय-ज्ञेय-उपादेय का रहस्य जानकर, अपना हित तुरन्त कर लेना चाहिए।

प्रश्न 21 – उत्तमक्षमा की पहिचान क्या है ?

उत्तर – (1) शक्तिरूप उत्तमक्षमा — त्रिकाली अपनी आत्मा; (2) एकदेश उत्तमक्षमा — एकदेश वीतरागदशा; (3) पूर्ण उत्तमक्षमा — परिपूर्ण क्षायिकदशा; (4) द्रव्य उत्तमक्षमा — ज्ञानियों की भूमिकानुसार क्षमासम्बन्धी राग; (5) जड़ उत्तमक्षमा — हाथ जोड़ने-बोलने आदि की क्रिया।

प्रश्न 22 – उत्तमक्षमा को संयोगादि में लगाओ ?

उत्तर – चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 23 – उत्तमक्षमा दशा क्या बताती है ?

उत्तर – शक्तिरूप उत्तमक्षमा का आश्रय लेने से, एकदेश उत्तमक्षमा की प्राप्ति होती है और शक्तिरूप उत्तमक्षमा का परिपूर्ण आश्रय लेने से, पूर्ण क्षायिकरूप उत्तमक्षमा की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिका अनुसार जो क्षमा सम्बन्धी विकल्प आता है, वह द्रव्य उत्तमक्षमा है। क्षमा सम्बन्धी बोलने आदि की क्रिया होती है, वह जड़ उत्तमक्षमा है। द्रव्य उत्तमक्षमा और जड़ उत्तमक्षमा का निमित्त नैमित्तिक सम्बन्ध है; वह ज्ञानियों को व्यहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता, वह जड़ उत्तमक्षमा आदि को ही उत्तमक्षमा मानकर, चारों गतियों में भ्रमण करता है। इसलिए पात्र जीवों को उत्तमक्षमा का स्वरूप समझकर अपना कल्याण कर लेना चाहिए। इसी प्रकार अन्य धर्मों पर घटित करना चाहिए।

प्रश्न 24 – ईर्यासमिति की पहिचान क्या है ?

उत्तर – (1) शक्तिरूप ईर्यासमिति — त्रिकाली अपनी आत्मा; (2) एकदेश भाव ईर्यासमिति — एकदेश वीतरागता; (3) पूर्ण भाव ईर्यासमिति — परिपूर्ण शुद्धदशा; (4) द्रव्य ईर्यासमिति —

अपने गुरु के पास जाने का भाव या यात्रा का भाव; (5) जड़ ईर्यासमिति — चार हाथ जमीन देखकर चलने की शरीर की क्रिया।

प्रश्न 25 - ईर्यासमिति को संयोगादि में लगाओ ?

उत्तर - चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 26 - ईर्यासमिति क्या बताती है।

उत्तर - शक्तिरूप ईर्यासमिति का आश्रय लेने से, एकदेश भाव ईर्यासमिति की प्राप्ति होती है और शक्तिरूप ईर्यासमिति का पूर्ण आश्रय लेने से, पूर्ण ईर्यासमिति की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिकानुसार यात्रादि का विकल्प, द्रव्य ईर्यासमिति है। चलने आदि की क्रिया, जड़ ईर्यासमिति है। द्रव्य ईर्यासमिति और जड़ ईर्यासमिति का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, जो ज्ञानियों को व्यवहारनय का ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता; वह चार हाथ जमीन देखकर चलने की क्रिया ही ईर्यासमिति है - ऐसा मानकर उसी में पागल बना रहता है; उसके फल में मिथ्यात्वादि पाँच कारणों की पुष्टि करता है, जो अनन्त संसार का कारण है।

प्रश्न 27 - वचनगुप्ति की पहिचान क्या है ?

उत्तर - (1) शक्तिरूप वचनगुप्ति — त्रिकाली अपनी आत्मा; (2) एकदेश भाव वचनगुप्ति — एकदेश वीतरागता; (3) पूर्ण भाव वचनगुप्ति — परिपूर्ण क्षायिकदशा; (4) द्रव्य वचनगुप्ति — वचन न बोलने का विकल्प; (5) जड़ वचनगुप्ति — न बोलने की क्रिया।

प्रश्न 28 - वचनगुप्ति को संयोगादि में लगाओ ?

उत्तर - चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 29 - वचनगुप्ति क्या बताती है ?

उत्तर - शक्तिरूप वचनगुप्ति का आश्रय लेने से, एकदेश भाव

वचनगुप्ति की प्राप्ति होती है और शक्तिरूप वचनगुप्ति का परिपूर्ण आश्रय लेने से, पूर्ण भाव वचनगुप्ति की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिकानुसार वचन न बोलने का विकल्प आता है, वह द्रव्य वचनगुप्ति है। वचन न बोलने की क्रिया, जड़ वचनगुप्ति है। द्रव्य वचनगुप्ति और जड़ वचनगुप्ति का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, जो ज्ञानियों को व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता है; इस कारण जड़ वचनगुप्ति को ही सत्यार्थ मानकर संसार बढ़ाता है।

प्रश्न 30 - क्षुधापरिषहजय की पहिचान क्या है ?

उत्तर - (1) शक्तिरूप क्षुधा परिषहजय — त्रिकाली आत्मा; (2) एकदेशभाव क्षुधापरिषहजय — एकदेश वीतरागता; (3) पूर्ण भाव क्षुधापरिषहजय — पूर्ण क्षायिकदशा; (4) द्रव्य क्षुधापरिषहजय — आहार न लेने का विकल्प; (5) जड़ क्षुधापरिषहजय — शरीर के साथ आहार का योग न होना।

प्रश्न 31 - क्षुधापरिषहजय को संयोगादि में लगाओ ?

उत्तर - चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 32 - क्षुधापरिषहजय क्या बताता है ?

उत्तर - शक्तिरूप क्षुधापरिषहजय का आश्रय लेने से, एकदेश क्षुधापरिषहजय की प्राप्ति होती है और शक्तिरूप क्षुधापरिषहजय का पूर्ण आश्रय लेने से, पूर्ण क्षुधापरिषहजय की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिकानुसार क्षुधा सम्बन्धी विकल्प आता है, वह विकल्प द्रव्य क्षुधापरिषहजय है। आहार आदि का योग न होना, जड़ क्षुधापरिषहजय है। द्रव्य क्षुधापरिषहजय और जड़ क्षुधापरिषहजय का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, जो ज्ञानियों को व्यवाहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता है; वह आहार

न लेने को क्षुधापरिषहजय मान लेता है, उसी से धर्म मानता हैं, जो संसार का कारण है। इसलिए पात्र जीवों को क्षुधापरिषहजय का सही स्वरूप समझ लेना चाहिए।

प्रश्न 33 – नमस्कार की पहिचान क्या है ?

उत्तर – (1) शक्तिरूप नमस्कार — त्रिकाली स्वभाव; (2) एकदेश भावनमस्कार — एकदेश वीतरागता; (3) पूर्ण भावनमस्कार — पूर्ण क्षायिकदशा; (4) द्रव्यनमस्कार — वीतरागसर्वज्ञ के प्रति राग; (5) जड़ नमस्कार — शरीर की क्रिया।

प्रश्न 34 – नमस्कार को संयोगादि में लगाओ ?

उत्तर – चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 35 – नमस्कार क्या बताता है ?

उत्तर – (1) शक्तिरूप नमस्कार का आश्रय लेने से, एक देश भाव नमस्कार की प्राप्ति होती है और शक्तिरूप नमस्कार का पूर्ण आश्रय लेने से, पूर्ण भाव नमस्कार की प्राप्ति होती है। ज्ञानी को अपनी-अपनी भूमिका अनुसार जो वीतराग-सर्वज्ञ आदि के प्रति बहुमान का राग आता है, वह द्रव्यनमस्कार है। शरीर आदि की क्रिया, जड़ नमस्कार है। द्रव्यनमस्कार का और जड़ नमस्कार का निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है, जो ज्ञानियों को व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता, वह बाहरी नमस्कारादि को ही सच्चा नमस्कार आदि मान लेता है; इस कारण चारों गतियों का पात्र होता है, पंचमगति प्राप्त का पात्र नहीं बनता है।

प्रश्न 36 – संयोग की पृथकता आदि की पहिचान क्या है ?

उत्तर – (1) परम स्वभाव की सामर्थ्यता; (2) एकदेश स्वभाव की सामर्थ्यता — एकदेश वीतरागता; (3) पूर्ण स्वभाव की सामर्थ्य

— पूर्ण शुद्धदशा; (4) विभाव की विपरीत - शुभाशुभ विकारीभाव; (5) संयोग की पृथकता-संयोग आदि परद्रव्य।

प्रश्न 37 - संयोग की पृथकता आदि को संयोगादि में लगाओ ?

उत्तर - चार्ट में देखकर स्वयं लगायें।

प्रश्न 38 - परम स्वभाव की सामर्थ्यता आदि क्या बताते हैं ?

उत्तर - परम स्वभाव की सामर्थ्यता का आश्रय लेने से, एक देश स्वभाव की सामर्थ्यता प्रगट होती है और परम स्वभाव की सामर्थ्यता का परिपूर्ण आश्रय लेने से, पूर्ण स्वभाव की सामर्थ्यता की प्राप्ति होती है। ज्ञानी की अपनी-अपनी भूमिका अनुसार जो वीतराग-सर्वज्ञ आदि के प्रति बहुमान का भाव-विकार की विपरीतता है। संयोग आदि संयोग की पृथक्ता है। विभाव की विपरीतता का और संयोग की पृथकता की निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है। जो ज्ञानियों के व्यवहारनय से ज्ञान का ज्ञेय है। अज्ञानी इस रहस्य को नहीं जानता है वह ज्ञानियों की भाँति नकल करता है जो चारों गतियों के भ्रमण का कारण बनता है। इसलिए समझो-समझो।

जय-महावीर-जय-महावीर

समाप्त

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

जन्म : सन् 1913

देह परिवर्तन : 19 दिसम्बर 2012

जन्मस्थान : ग्राम टिकरी, जिला मेरठ, उत्तरप्रदेश

पिता – श्री मिट्ठनलाल जैन

माता – श्रीमती भरतोदेवी जैन

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा, मथुरा-चौरासी एवं तत्पश्चात् जम्बू-विद्यालय, सहारनपुर में हुई। लघुवय में लाहौर में स्वतन्त्र व्यवसाय किया। देश के स्वाधीन होने के पश्चात्, स्वदेश वापिसी और बुलन्दशहर (उ०प्र०) में आजाद ट्रेडिंग कम्पनी के नाम से, पुस्तकों एवं स्टेशनरी का व्यवसाय किया। अपनी सहधर्मिणी श्रीमती विमलादेवी, चार पुत्रियों तथा एक पुत्र के साथ, पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वहन करते हुए, धर्ममार्ग पर गतिशील रहे।

सिद्धक्षेत्र श्री गिरनारजी की यात्रा के समय, सोनगढ़ में विराजित दिव्यविभूति पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के मंगल साक्षात्कार के उपरान्त, आपके जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हुआ। फलस्वरूप, निरन्तर तत्त्वाराधना एवं तत्त्वप्रचार ही आपके जीवन के अभिन्न अंग बन गये और सम्पूर्ण देश में तत्त्वज्ञान की पताका फहराने के लिये, आप एकाकी निकल पड़े।

पूज्य गुरुदेवश्री के मंगल प्रवचनों एवं माननीय श्री रामजीभाई दोशी एवं खेमचन्दभाई सेठ की कक्षाओं में जो कुछ सीखा, उसे 'जैन-सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' के, आठ भाग के रूप में संकलन का कार्य कर, जन-जन को जिनधर्म के गूढ़ रहस्य को साधारण भाषा में प्रस्तुत करने का अपूर्व कार्य किया।

आपकी तत्त्वज्ञान की प्रचार-प्रसार की उत्कृष्ट भावनाओं के फलस्वरूप, उन्हें क्रियान्वित करने हेतु, **तीर्थधाम मङ्गलायतन** के रूप में आपके स्वप्न को आपके परिवार व समग्र मुमुक्षु-समाज ने साकार किया। यहाँ से प्रकाशित मासिक-पत्रिका, **मङ्गलायतन** के आप आजीवन प्रधान सम्पादक रहे।

स्वाभिमानीवृत्ति के साथ ही, निर्भीकता, निस्पृहता, सिद्धान्तों पर अडिगता आदि आपके व्यक्तित्व की उल्लेखनीय विशेषताएँ रही हैं।

आपके उपकारों के प्रति नतमस्तक होते हुए, आपके श्रीचरणों में वन्दन समर्पित करते हैं, और आपकी इस अनुपम कृति को समाज के लाभार्थ प्रस्तुत कर रहे हैं।

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला (भाग - 1) उत्तरार्द्ध